

भारतीय साहित्य के निर्माता

सोहनलाल द्विवेदी

परमानंद पांचाल

सोहनलाल द्विवेदी

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ--रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं, इसे नीचे बैठा लिपिक लिपिबद्ध कर रहा है । भारत में लेखन-कला का सम्भवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख ।

नागार्जुन कोण्डा, दूसरी सदी ई.

सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

भारतीय साहित्य के निर्माता

सोहनलाल द्विवेदी

परमानंद पांचाल



साहित्य अकादेमी

Sohanlal Dwivedi: A monograph in Hindi on modern Hindi poet by Paramanand Panchal. Sahitya Akademi, New Delhi (2006), Rs. 25.

प्रथम संस्करण : 2006

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवीन्द्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली 110 001
विक्रय विभाग, स्वाति, मंदिर मार्ग, नई दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
172, मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय मार्ग, दादर, मुंबई 400 014
जीवनतारा बिल्डिंग, चौथी मंज़िल, 23 ए/44 एक्स.,
डायमंड हार्बर रोड, कोलकाता 700 053
सेंट्रल कॉलेज परिसर, डॉ. बी. आर. आंबेडकर वीथी, बंगलौर 560 001

चेन्नई कार्यालय
मेन बिल्डिंग, गुना बिल्डिंग्स (द्वितीय तल), 443(304)
अन्नासालइ, तेनामपेट, चेन्नई 600 018

ISBN 81-260-2261-2

मूल्य : पच्चीस रुपये

शब्द संयोजक एवं मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एंड प्रिंटर्स, दिल्ली-110032

प्राक्कथन

कविवर पं. सोहनलाल द्विवेदी को समझने और उनके संबंध में लिखने की प्रेरणा मुझे उनके गीत 'चल पड़े जिधर दो डग मग में, चल पड़े कोटि पग उसी ओर' से मिली। उनके इस गीत को पढ़कर मैं इतना अभिभूत हुआ कि इसे बार-बार पढ़ा। मुझे लगा कि विश्ववंद्य महात्मा गाँधी के महान व्यक्तित्व और उनकी लोकप्रियता की जितनी सटीक, सजीव और सुस्पष्ट व्याख्या इस गीत के रचयिता ने की है, उतनी शायद ही किसी न की हो। मैं आभारी हूँ साहित्य अकादेमी का, जिसने मुझे राष्ट्रीयता के इस महान गायक, पं. सोहनलाल द्विवेदी पर विनिबंध लिखने का अवसर प्रदान किया। यह सौभाग्य ही है कि वर्ष 2006 उनका जन्म शताब्दी वर्ष है और यह कृति भी उनके जन्मशती वर्ष में प्रकाशित हो रही है।

पं. सोहनलाल द्विवेदी स्वतंत्रता आंदोलन युग के ऐसे विराट कवि थे, जिन्होंने जनता में राष्ट्रीय चेतना जागृत करने, उनमें देश भक्ति की भावना भरने तथा नव युवकों को देश के लिए बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने की प्रेरणा देने में अपनी सारी शक्ति लगा दी। वे पूर्णतः राष्ट्र को समर्पित कवि थे। राष्ट्रनायक गाँधी जी के प्रति उनकी अटूट आस्था थी। उन्होंने युगपुरुष के रूप में गाँधी का स्तवन किया। गाँधी एक प्रकार से उनके समस्त काव्य की धुरी हैं। उन्होंने स्वयं लिखा है, "आलोचकों का मत है कि मैंने अपनी रचनाओं में गाँधी जी को बहुत ऊपर उठा दिया है, सच तो यह है कि बापू ने मेरी रचनाओं को ऊपर उठाया है।"

ऐसे युग चेता राष्ट्रकवि के संबंध में कुछ लिखना स्वयं में एक चुनौती था। साहित्य आलोचकों ने उन्हें या तो बालगीत रचयिता कहकर या एक ओजस्वी गीतकार कहकर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर ली। लगता है हिन्दी साहित्य के इतिहास में शायद उनके साथ समुचित न्याय ही नहीं हो पाया। जिस कवि का आदि और अंत केवल देश को समर्पित हो, राष्ट्र के हित के लिए हो, करोड़ों श्रमिकों, कृषकों और पिछड़ों के लिए हो, विदेशी दासता से मुक्ति के लिए हो, ऐसे युगीन कवि की उपेक्षा भला कैसे की जा सकती है? उनकी लेखनी ने सोतों को जगाया, बैठों को उठाया, युवकों को हिलाया, उनमें साहस और शौर्य का संचार किया। उन्होंने जनता में ऐसा आत्म विश्वास भरा कि वे आज़ादी के दीवाने बन बिना

शस्त्र-अस्त्र के भी विदेशी सत्ता से लोहा लेने के लिए उठ खड़े हुए। कहना न होगा कि ऐसे कवि के संबंध में सामग्री सीमित ही थी। मैं गाँधी संग्रहालय नई दिल्ली, साहित्य अकादेमी पुस्तकालय, नई दिल्ली, और इष्ट मित्रों से उपलब्ध सामग्री को संजोकर, बटोरकर इस विनिबंध को संपूर्ण कर सका, इसके लिए, मैं इन सबके प्रति आभार व्यक्त करना अपना कर्तव्य मानता हूँ।

इस विनिबंध में द्विवेदी जी के जीवन और कृतित्व के साथ-साथ उनकी प्रमुख कृतियों, रचनाओं, बालगीतों तथा उनके द्वारा संपादित ग्रंथों पर भी संक्षिप्त रूप में विचार किया गया है। कवि के काव्य का मेरुदंड राष्ट्रीयता है, इस पर निश्चय ही विशेष रूप से प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। पुस्तक सुधी पाठकों को समर्पित है।

गणतंत्र दिवस
26 जनवरी 2005

डॉ. परमानंद पांचाल

अनुक्रम

1

जीवन और व्यक्तित्व

जीवन-वृत्त

किसी भी ख्यातिप्राप्त व्यक्ति के योगदान की भूमिका का स्रोत उसके जीवन की घटनाओं और उसकी जीवन शैली में खोजा जा सकता है। राष्ट्रीय चेतना के अमर गायक श्री सोहनलाल द्विवेदी के कृतित्व में भी उनके उदात्त व्यक्तित्व और राष्ट्र के प्रति उनके अगाध प्रेम के दर्शन होते हैं।

श्री सोहनलाल द्विवेदी का जन्म विक्रमी संवत् 1962 की फाल्गुन शुक्ला अष्टमी, तदनुसार 4 मार्च 1906 ई. को शनिवार के दिन क़स्बा बिन्दकी, ज़िला फ़तेहपुर (उत्तर प्रदेश) में एक सुसंपन्न कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। पिता का नाम पं. विन्दा प्रसाद द्विवेदी था। वे गल्ले का व्यापार करते थे। बाल्यकाल में ही पिता का साया सिर से उठ गया। उस समय उनकी आयु सात वर्ष की थी। वे तीन भाई थे। ज्येष्ठ भ्राता भी अल्पायु में काल कवलित हो गए। दूसरे अग्रज श्री मोहनलाल द्विवेदी ने ही परिवार के पालन-पोषण के साथ-साथ अपने कनिष्ठ भ्राता, श्री सोहनलाल द्विवेदी की शिक्षा-दीक्षा का भी बड़े स्नेहपूर्ण भाव से प्रबंध किया, किन्तु उनकी भी असामयिक मृत्यु हो जाने के कारण श्री सोहनलाल द्विवेदी को अपनी प्रतिभा का विकास स्वाभाविक रूप से स्वयं ही करने के प्रयास करने पड़े।

उनकी प्रारंभिक शिक्षा बिन्दकी में ही हुई। बाद में वे फ़तेहपुर के एंग्लो संस्कृत विद्यालय में भर्ती हो गए। इस विद्यालय के प्रधान अध्यापक पं. श्रीधरगोर महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे, जो राष्ट्रीय विचारधारा से ओत-प्रोत थे। इसी स्कूल में उनके जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी, जिससे वे राष्ट्रीय आंदोलन की डगर के राही बनने की ओर अग्रसर हुए।

---

1. कविवर सोहनलाल द्विवेदीजी के अभिनंदन ग्रन्थ *एक कवि : एक देश* में उनका जन्म वर्ष 1905 लिखा गया है, किन्तु डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा को लिखे गए अपने पत्र में श्री सोहनलाल द्विवेदी ने अपनी जन्म की तारीख़ 4 मार्च 1906, फाल्गुन शुक्ला 8 संवत् 1962 बताई है। (देखिए, *सोहनलाल द्विवेदी और उनका काव्य*, डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा, पृ. 251)

17 नवंबर 1921 को प्रिंस ऑफ़ वेल्स के भारत आगमन की खुशी में इस स्कूल में मिठाई बाँटी गई। उस समय वे सातवीं कक्षा के छात्र थे। उन्होंने मिठाई लेने से इनकार कर दिया और बेझिझक कह दिया, "गुलामी के लड्डुओं को खाने से आज़ादी के चने चबाना बेहतर है।" इतना कहकर बालक सोहनलाल पंक्ति से बाहर निकल आया और हाथ उठाकर नारे लगाता हुआ शहर की ओर बढ़ गया, "माता का आँचल लाल करो! हड़ताल करो, हड़ताल करो!" यह सुनते ही सारे नगर में हड़ताल हो गई, दुकानें बंद हो गई। ब्रिटिश युवराज का यह अनोखा स्वागत था, जिसके नायक थे—निर्भीक बालक सोहनलाल द्विवेदी। यह राष्ट्रीय भावना का पहला पाठ था, जो छात्रावस्था में ही भावी राष्ट्रकवि द्विवेदी जी ने पढ़ लिया।

छात्रावस्था में ही उन्हें *प्रताप* के संपादक श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के संपर्क में आने का अवसर प्राप्त हुआ। विद्यार्थी जी के ओजस्वी भाषण से प्रेरित हो उन्होंने रेशमी वस्त्र त्यागकर आजीवन खादी धारण करने का व्रत ले लिया। इसका विकल्प कभी भी उन्होंने जीवन में नहीं आने दिया। यहाँ तक कि अपने विवाह के शुभ अवसर पर भी उन्होंने खादी का ही वरण किया और कहा, "खादी ही हमारा राष्ट्रीय परिधान है, चाहे विवाह हो या कोई और राष्ट्रीय पर्व। वस्त्र वही धारण करने चाहिए, जिनमें अपनेपन का अभिमान हो।" विवश हो विवाह के अवसर पर दुल्हन के रेशमी आँचल में खादी के उत्तरीय की ही गाँठ जोड़ी गई।

राजकीय विद्यालय फ़तेहपुर से इन्होंने 1925 ई. में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। यहाँ वे महामना मदन मोहन मालवीय के अतिरिक्त हिन्दी के ख्यातिप्राप्त विद्वानों और कवियों के संपर्क में आए, जिससे उन्हें अपनी काव्य-प्रतिभा और राष्ट्र-प्रेम की भावना को प्रखर रूप देने का सुअवसर प्राप्त हुआ। अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, बाबू श्याम सुन्दर दास एवं आचार्य केशव प्रसाद मिश्र सरीखे प्रबुद्ध शिक्षकों और विद्वानों के संसर्ग लाभ से उन्हें शिक्षार्जन के साथ-साथ साहित्यिक चेतना के प्रस्फुरण और देश-प्रेम की अभिव्यक्ति हेतु काव्य-प्रतिभा को तेज़ धार देने का अनुकूल अवसर भी प्राप्त हुआ। यहीं उनकी कविता 'राणा प्रताप के प्रति' ने उन्हें राष्ट्रीय स्तर के कवि के रूप में पहचान दी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के महापंडित आचार्य केशव प्रसाद मिश्र इनके गुरु थे। परंतु जब उन्होंने इनकी 'महाराणा प्रताप' कविता सुनी तो इतने प्रभावित हुए कि वे कह उठे 'आज से तुम मेरे गुरु हो'। जब ये बी.ए. के छात्र थे तो महात्मा गाँधी का 'नमक सत्याग्रह आंदोलन' आरंभ हो गया। इस अवसर पर भला सोहनलाल द्विवेदी कब चूकने वाले थे। अपने कुछ साथियों के साथ वे सत्याग्रह में भाग लेने के लिए चल पड़े। पुलिस ने इन्हें गंतव्य तक पहुँचने से रोक दिया। मालवीय जी के आदेश पर अब उन्होंने राष्ट्रप्रेम को राष्ट्र उद्‌बोधन के गीतों द्वारा अभिव्यक्ति देने का माध्यम बना लिया।

1930 में विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में महात्मा गाँधी पधारे तो युवा कवि सोहनलाल द्विवेदी को गाँधी जी के प्रति अपनी श्रद्धा को व्यक्त करने का स्वर्णिम अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने 'खादी गीत' से उनका अभिनंदन किया। डॉ. लालचंद्र तैलंग ने इस रोमांचक घटना का वर्णन करते हुए लिखा है–

देशभक्ति का टीका लगाए खद्दर का कुर्त्ता पहने किशोर सोहनलाल ने खादी के सजे शुभ्र मंच पर आकर प्रेम के फ्रेम में मढ़े खादी गीत की पंक्तियाँ पढ़ी–

खादी के धागे-धागे में अपनेपन का अभिमान भरा
माता का इसमें मान भरा, अन्यायी का अपमान भरा
खादी के रेशे-रेशे में अपने भाई का प्यार भरा
माँ-बहनों का सत्कार भरा, बच्चों का मधुर दुलार भरा!

"खादी गीत की इन पंक्तियों ने महात्मा गाँधी और महामना मालवीय जैसे राष्ट्र नेताओं के रोम-रोम को पुलकित कर दिया। उपस्थित जन-समूह भाव-विभोर हो उठा। गाँधी जी ने फ्रेम में मढ़े इस गीत को नीलाम करने का आदेश दिया तो इस पर बोलियाँ लगने लगीं और तीन सौ रुपये में यह कविताजड़ित फ्रेम प्रेम से दे दिया गया। कुछ ही दिनों में खादी गीत की धूम देश भर में मच गई। काशी की एक रिर्काडिंग कंपनी ने इसका रिकार्ड तैयार कर घर-घर में पहुँचाने का कार्य किया। खादी आश्रम, मेरठ ने इसे गाँधी जी के चित्र के साथ आर्ट पेपर पर छपवाकर हज़ारों की संख्या में वितरित किया। इनके बड़े भाई ने जब ब्रिटिश सरकार द्वारा उनके विरुद्ध दमन-कुठार की आशंका जताई तो कवि ने कहा, "मेरी वाणी हिंसा नहीं, अहिंसा से बँधी है...मेरी कविताओं के पीछे गाँधी की आत्मा एवं गौतम का जीवन दर्शन है।"

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से 1931 में बी.ए. की परीक्षा पास करने के बाद वे प्रयाग विश्वविद्यालय में प्रविष्ट हुए, किन्तु एक वर्ष बाद ही पुनः काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में लौट आए। 1935 ई. में उन्होंने एम.ए. के साथ विधि की उपाधि भी प्राप्त की। अब समय आया जीविकार्जन के लिए व्यवसाय के चयन का। इन्होंने अपने गाँव के समीपवर्ती ज़िला मुख्यालय फ़तेहपुर में ही विधि-वक्ता के रूप में कार्य आरंभ कर दिया। किन्तु वकालत में मन नहीं रमा और राष्ट्र एवं समाज के प्रति सेवा को ही उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। अब वे रचनात्मक कार्यों में ही रुचि लेने लगे।

सार्वजनिक क्षेत्र में इनका पदार्पण ज़िला परिषद के सदस्य के रूप में हुआ और 1943 ई. तक इस पद पर आसीन रहे। अब एक सफल राष्ट्रकवि, प्रखर और ओजस्वी वक्ता तथा सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। इसी बीच लखनऊ से एक राष्ट्रीय पत्र *दैनिक अधिकार* प्रकाशित करने

का प्रस्ताव राष्ट्रीय विचारधारा के कुछ मित्रों द्वारा आया तो द्विवेदी जी ने सहर्ष इसका संपादक बनना स्वीकार कर लिया और 1938 से 1945 तक इस सशक्त दैनिक का सफल संपादन किया। विशेषता यह रही कि इन्होंने उसे आत्म विज्ञापन का माध्यम बनाने की कल्पना तक भी नहीं की।

गाँधी जी की 'हीरक जयंती' के अवसर पर गाँधी अभिनंदन-ग्रंथ की योजना बनाई गई। इसके संपादन का गुरु भार सोहनलाल द्विवेदी के कंधों पर पड़ा। इस ग्रंथ में प्रत्यक्ष रूप से गाँधी जी का सम्मान तथा परोक्ष रूप से राष्ट्रीय संघर्ष एवं चिन्ता के क्षणों में जन जीवन को सर्वत्र सांस्कृतिक आधार प्रदान करने की भावना निहित थी। देश-विदेश के मूर्धन्य विद्वानों, साहित्यकारों और चित्रकारों के सहयोग से 1944 में यह गौरव-ग्रंथ प्रकाशित हुआ। इसमें हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों के साथ-साथ हिन्दीतर भाषाओं यथा तेलुगु, कन्नड, मलयाळम् और विदेशी भाषाओं—अंग्रेज़ी और चीनी के प्रकांड विद्वानों के लेख और कविताएँ भी समाहित की गई। यह ग्रंथ द्विवेदी जी की कर्म-साधना, अध्यवसायी क्षमता और समन्वयकारी प्रवृत्ति का ज्वलंत प्रमाण है। इस ग्रंथ के लिए श्री घनश्याम दास बिड़ला द्वारा 5,000 रु. की धन-राशि का चैक प्रदान किया गया था, किन्तु उसकी वापसी 10,000 रु. के चैक के साथ गाँधी जी को अभिनंदन-ग्रंथ समर्पण के साथ की गई, जिसे महादेव देसाई स्मारक के निमित्त समर्पित किया गया।

1939 में जबलपुर में हुए त्रिपुरा कांग्रेस के अधिवेशन के अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन की घटनाएँ ऐसी थीं कि उनसे कवि सोहनलाल द्विवेदी की काव्य-प्रतिभा की धाक पूरे भारत के मनीषियों और राष्ट्र-प्रेमियों पर स्थायी रूप से जम गई। श्री रामानुजलाल श्रीवास्तव ने इसका वर्णन करते हुए लिखा है—

"कुछ प्रांतीय कवियों के बाद भीगी हुई रात में पं. सोलन लाल द्विवेदी! इनकी गरज से तो जैसे ज़मीन गरजने लगी। एक कविता समाप्त होते ही दूसरी की फ़र्माइश, तीसरी की फ़र्माइश। कहाँ तो कवि सम्मेलन सफलता की पराकाष्ठा को पहुँच रहा था और कहाँ प्रदर्शनी के रात के 12 बज गए और चिराग़ गुल की सदा आने लगी।...जनता भला कब साँस लेनेवाली थी। चारों तरफ़ से आवाज़े आने लगीं। बुझा दीजिए बत्तियाँ। हम कवियों के दर्शन कर चुके। उनकी कविताएँ अँधेरे में भी सुन सकते है।" इस सम्मेलन से कवि सोहनलाल द्विवेदी की लोकप्रियता में और भी चार चाँद लग गए। उन्होंने जनता का आह्वान किया—

अब न गहरी नींद में तुम सो सकोगे
गीत गाकर मैं जगाने आ रहा हूँ।
अतल अस्ताचल तुम्हें जाने न दूँगा
अरुण उदयाचल सजाने आ रहा हूँ।

—मुक्तिगंधा से

1946 में इनके अग्रज पं. मोहन लाल द्विवेदी की अकस्मात् मृत्यु हो गई। फलतः पैतृक संपत्ति और उत्तराधिकार की देखभाल के लिए कवि सोहनलाल द्विवेदी बिन्दकी चले आए। डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा ने अपने शोध ग्रंथ में लिखा है, "कवि की जो कल्पना अब तक बाल-गीतों के रूप में *शिशु भारती* (काव्य संग्रह) बनकर प्रकट हुई थी। वह बिन्दकी में आकर 'शिशु भारती' नामक मांटेसरी स्कूल के रूप में साकार हो गई। इन्हीं के प्रयासों से यहाँ पहली राजकीय कन्या पाठशाला खुली, जो आगे चलकर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बन गई।"

मार्च 1964 में वे बिन्दकी नगरपालिका के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। समाज सेवा और निर्धनों की सहायता के लिए वे सदैव तत्पर रहते थे। उनका कहना था "मुझे समाज सेवा के कामों में आनंद आता है। दिन भर में यदि किसी ग़रीब का एक काम भी मैंने कर दिया तो समझता हूँ आज का दिन सफल हुआ।"

—*काव्य के इतिहास पुरुष,* अमर बहादुर सिंह अमरेश, पृ. 160

ज़िलाधीश द्वारा उन्हें स्पेशल मजिस्ट्रेट का पद प्रदान किया गया, जिसे उन्होंने ससम्मान अस्वीकार कर दिया।

कवि सोहनलाल द्विवेदी जी को बाल साहित्य की रचना में बड़ी रुचि थी। *शिशु* और *बालसखा* जैसी बाल पत्रिका में वे निरंतर लिखते थे। 1965 में वे *बालसखा* के संपादक बन गए। *बालसखा* में उन्होंने नया जीवन फूँक दिया और उससे बाल चित्रावली का नया स्तंभ जोड़कर उसे लोकप्रिय ही नहीं बनाया, उसकी गरिमा को भी द्विगुणित कर दिया। दस वर्ष तक इसका कुशल संपादन करने के बाद वे बिन्दकी लौट आए और शेष जीवन यहीं रहकर लोकसेवा और साहित्य सेवा को समर्पित कर दिया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, उत्तर प्रदेश द्वारा 1968 में इनका अभिनंदन किया गया।

देशप्रेम एवं कर्मठता कविवर द्विवेदी जी की सबसे बड़ी विशेषता थी। वे गाँधी जी के अनन्य भक्त थे। इसलिए उनके राष्ट्रप्रेम में क्षेत्रीयता और संकीर्णता की गंध कहीं भी नहीं दिखाई देगी। 1969 में उन्हें राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर द्वारा सर्वोच्च उपाधि 'साहित्य चूड़ामणि' से विभूषित किया गया। विद्यापीठ के कुलपति श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने प्रशस्ति पत्र भेंट किया। 1969 में राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी की साहित्य और राष्ट्र की अतुलनीय सेवाओं के उपलक्ष्य में उनके महान व्यक्तित्व और कृतित्व को साहित्यांजलि के रूप में प्रस्तुत करते हुए 'पं. सोहनलाल द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ' का प्रणयन हुआ, जिसे *एक कवि : एक देश* का सर्वथा सार्थक नाम दिया गया। इसके अविस्मरणीय संपादन में सर्वश्री बनारसी दास चतुर्वेदी, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, श्रीनारायण चतुर्वेदी तथा वाचस्पति गैरोला जैसे लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकारों ने अपना योगदान दिया और डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन, आचार्य क्षेमचंद्र

सुमन, अमृतलाल नागर, डॉ. प्रभाकर माचवे, भवानी प्रसाद मिश्र एवं नागार्जुन प्रभृति साहित्यकारों और मनीषियों ने अपने लेखों से इसे समृद्धि प्रदान की थी। 1970 में इन्हें भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' अलंकरण से अलंकृत किया गया। कानपुर विश्वविद्यालय ने इन्हें 1974 में डी. लिट. की मानद उपाधि से सम्मानित किया। 1975 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नब्बे वर्ष पूर्ण होने पर लाल क़िले में जो राष्ट्रीय लेखक सम्मेलन आयोजित हुआ, उसकी अध्यक्षता का श्रेय भी राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी जी को ही जाता है। 1976 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इनके सम्मान में 'हिन्दी दिवस' के अवसर पर बिन्दकी के स्थानीय कालेज का नाम 'पंडित सोहनलाल गवर्नमेंट कॉलेज' रख दिया गया। 1982 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने इन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि से विभूषित किया। निरंतर साहित्य साधना और देश सेवा में अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक समर्पण की भावना का यह ओजस्वी कवि और राष्ट्रीय चेतना का गायक देशवासियों में नवजागरण के प्राण फूँकता हुआ पहली मार्च 1988 को स्वयं गहरी नींद में सो गया, किन्तु उनका यह संदेश आज भी नवयुवकों में त्याग और बलिदान की भावना का संचार करता प्रतीत होता है–

लिखूँ कर्म वीरों की गाथा
कैसे वे होते बलिदान।
और फूँक दूँ मृतक जाति में
नूतन जीवन, नूतन प्राण।

कविवर सोहनलाल जी एक सच्चे देशभक्त, राष्ट्रीयता के ओजस्वी गायक थे। उनके लिए राष्ट्र ही सर्वोपरि था। उसके एवज में उन्हें न किसी सम्मान की चाह थी न अलंकरण की। उनका सार था–

मुझे नहीं है लोभ, राज्य के वरदानी वरदान का
मुझे नहीं है लोभ, राज्य के सम्मानी सम्मान का
मैं जनता का साथी हूँ, मैं कवि हूँ हिन्दुस्तान का

अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' अपनी पुस्तक *काव्य के इतिहास पुरुष* में लिखते हैं, "द्विवेदी जी ने लक्ष्य पूर्ति के पश्चात् भी किसी अमृतफल की कामना नहीं की, देश की स्वतंत्रता के बाद भी। प्रत्युत वह एक सजग प्रहरी की भाँति समय-समय पर राष्ट्र को चरण देता रहा। यही कारण है कि मैं द्विवेदी जी को कवि, राष्ट्रकवि और युगकवि ही नहीं हिन्दी कविता का इतिहास-पुरुष मानता हूँ। ...मैंने द्विवेदी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का ऐतिहासिक रेखाचित्र प्रस्तुत किया, जिसमें शहीदों के रक्त की लाली और आज़ादी की हरियाली है। न इसे समय भूल सकता है, न इतिहास।"

व्यक्तित्व

कविवर सोहनलाल द्विवेदी जी के शब्द-शब्द में राष्ट्रीयता की भावना प्रतिबिम्बित होती है। वे राष्ट्रीय चेतना के गायक थे। गाँधी जी उनकी प्रेरणा के केन्द्र-बिन्दु थे। उनके पारस-स्पर्श ने द्विवेदी जी के काव्य-प्रतिभा को स्वर्णिम आभा प्रदान की। सोहनलाल द्विवेदी का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक और प्रभावशाली था। उनकी सरल प्रसादमयी भाषा, सहज भावुकता, सुबोध कल्पना राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत उनकी ओजस्वी वाणी में वह जादू था कि श्रोता और काव्यप्रेमी उनकी रचनाओं को सुनने के लिए खिंचे चले आते थे। प्रो. विद्यानंदन राजीव ने उनके शालीन व्यक्तित्व के संबंध में लिखा है, "धुली हुई खादी की रजतवर्णी धोती पर देशी बुना हुआ रेशम का मकरंदवर्णी कुर्ता, परिधान में श्वेत-पीत का साम्य, पांवों में देशी चप्पलें, अनुभवी वलियों से समलंकृत विशाल भाल।...गेंहुआ वर्ण, औसत व्यक्ति से कुछ अधिक उन्नत कद। कालिदास की दिलीप विषयक उक्ति : 'व्यूढ़ोरस्कः वृषभ कन्धः शालप्रांशुः महाभुज' के समान सुविस्तृत वक्ष और विशाल आजानु भुजाएँ, जिसके प्रतिशब्द में काव्य का माधुर्य, व्यक्तित्व में गाँधी का दर्शन तथा गीत में एक सादगी भरी शालीनता समवेत प्रकट होती है। इतनी विशेषताओं को एक साथ धारण करनेवाला व्यक्तित्व जिस नाम से जाना जाता है, वह है–सोहनलाल द्विवेदी।"

पं. सोहनलाल द्विवेदी का एक रूप राष्ट्रीय कवि का है और दूसरा बाल कवि का। श्रीनारायण जी उनके इसी दूसरे रूप की चुटकी अक्सर लिया करते। एक दिन श्रीनारायण चतुर्वेदी जी के निवास पर कविताओं का दौर चल रहा था। पंडित जी की तुकों पर चतुर्वेदी जी ने चुटकी ली और कहा सोहनलाल तुम्हारा तो नाम स्वयं ही राइम करता है और तुरंत उन्होंने कविता बनाई–

पंडित सोहनलाल द्विवेदी,
किसने तुमको टोपी दे दी?
किसने तुमको धोती दे दी,
पंडित सोहनलाल द्विवेदी।

सब लोग ख़ूब हँसे, कहना न होगा कि सबसे ज़ोर का ठहाका द्विवेदी जी ने स्वयं लगाया।

आचार्य किशोरीदास वाजपेयी, सोहनलाल द्विवेदी को राष्ट्रकवि मानते हुए उन्हें 'उशना' कवि कहते हैं। उन्होंने 'उशना' शब्द की व्याख्या करते हुए इतिहास के कुछ नए तथ्यों को उजागर किया है। उनका कहना है, "श्रीकृष्ण ने उशना को संसार का सर्वश्रेष्ठ कवि कहा है–कवीनामुशनाः कवि। उशना शुक्र कवि का नाम है। वे असुर कवि थे। जब देवासुर संग्राम हो रहा था, तब शुक्र कवि (उशना) ने असुरों को बार-बार विजय दिलवाई। प्रसिद्ध है कि शुक्र को संजीवनी विद्या आती थी,

जिससे वे मरे हुए असुरों को जीवित कर देते थे। यह संजीवनी विद्या कवि की वह अमृत वाणी ही थी, जो मरे हुए असुरों को भी जीवित कर देती थी—कायर से कायर को समर-रसिक बना देती थी। कृष्ण ने उसी वाणी को प्रशंसा की है। उसी औशनस संप्रदाय के कवि हैं—पंडित सोहनलाल द्विवेदी। 'औशनस' यानी राष्ट्रकवि सदा समर काव्य ही नहीं देता रहता, राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुसार समय-समय पर वह सब कुछ देता रहता है। यही राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी के बहुआयामी व्यक्तित्व की देन है।"

एक संपन्न परिवार में जन्म लेने पर भी दंभ और अहंकार उन्हें छू तक नहीं गया था। वे एक सरल प्रकृति के, सुसभ्य और भारतीय संस्कृति से ओत-प्रोत, राष्ट्रीय विचारधारा के व्यक्ति थे। छोटे से छोटे साधारण निर्धन ग्रामीणों तक से इनकी आत्मीयता को देखकर बहुतों को हैरानी भी होती थी। छोटे आदमी से बात करने का समय ही किसके पास है। वे जन्मजात स्पष्टवादी थे। कभी-कभी वे अपनी जनपदीय बोली में 'सुनौ हो, चहै तुमका नीक लागै, औ चहै न लागै, हम अइस न करब' इस लहजे में भी सुने जा सकते थे। निश्छलता, स्पष्टवादिता, सहानुभूति, अहंकार रहित स्वाभिमान, लोकोपकारिता, निस्पृहता जैसे संत सुलभ गुणों से संपन्न द्विवेदी जी मस्त प्रकृति के अनोखे व्यक्ति थे। किसी के दरवार में अपनी इच्छा लेकर हाज़िरी देना उनके स्वभाव में नहीं था। वैसे वे छोटे-बड़े सभी का आदर करते थे, पर किसी के बड़प्पन का बखान करके कोई उन पर रौब नहीं डाल सकता था। वे अपनी मौज के मालिक थे। मन आया तो एक निर्धन बालक के निमंत्रण पर चल पड़ें, नहीं तो मंत्री महोदय के कार्यक्रम में भी जाने को तैयार न हों। कई बार दिल्ली के बुलावे पर भी वे कहते सुने जाते, 'जो मनु होई हो जाब, कोई के नौकर नँइ हाँहिन।'

वे सहज भाव से कार्य करते और ऐसी ही अपेक्षा वे दूसरों से भी करते थे। औपचारिकता में उन्हें क़तई विश्वास नहीं था। व्यर्थ की बकवास, आलस्य, समय का दुरुपयोग और साधनों का अनुपयोग वे नहीं चाहते थे। भारतीयता द्विवेदी जी की बहुत बड़ी विशेषता थी। वे भारतीय संस्कृति के वाह्य और आभ्यंतर दोनों रूपों के उपासक थे। राष्ट्र-प्रेम उनकी नस-नस में समाहित था। कर्तव्यनिष्ठा और कर्मठता उनके स्वभाव में थी। संकीर्णता और क्षेत्रवाद के वे विरुद्ध थे। राष्ट्रवादी होने पर भी वे भारतीय परंपरा के इस मूल मंत्र को नहीं भूले थे 'सर्वे भवंतु सुखिनः'। देश कल्याण के साथ-साथ वे मानव कल्याण और विश्व कल्याण के भी समर्थक थे।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने 1969 में, जब वे संसद सदस्य थे, द्विवेदी जी के संबंध में लिखा था, "द्विवेदी जी की रचनाएँ जितनी सरल और मर्मस्पर्शी हैं, उनका व्यक्तित्व उतना ही स्नेह-स्निग्ध तथा आकर्षक है। उनमें कृत्रिमता अथवा अभिमान बिलकुल भी नहीं है, जो उनके संपर्क में आया है, वह उनका हो गया

है।" उनके व्यक्तित्व में झलकती इस आत्मीयता का रहस्य था—इनकी अटूट मस्ती। यह मस्ती द्विवेदी जी के जीवन की पूंजी थी। वे मित्रों के मित्र थे। उनसे मिलने जो भी इनके निवास स्थान बिन्दकी पहुँचता तो वह देखता कि द्विवेदी जी ज़मींदाराना ठाठ से रहते हैं। किसी को पान, किसी को मिठाई, किसी को भंग का गोला, किसी को मीठी बातें, किसी को हल्की-सी झिड़की और किसी को कार्यभार। इस प्रकार स्वाभावनुसार सभी की आवभगत, सभी की रुचि के अनुसार खाने-पिलाने का कार्यक्रम चलता रहता था। इस पर विशेषता यह थी कि उनका जीवन एकदम सादगी से भरा था। गाँधीयुगीन सादगी और शालीनता इनके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी थाती थी। संपन्न परिवार में जिस ठाठ-बाट से ये रहते थे, विवाह में खादी का जोड़ा ही पहनने का उनका संकल्प इसका साक्षी है। यह वह काल था, जब सरकारी कर्मचारी यदि खादी पहने तो सरकार उसे संदेह की दृष्टि से देखती थी। उनके श्वसुर सरकारी नौकरी में थे, किन्तु यदि होनेवाला दामाद खादी पहनकर विवाह मंडप में आए तो आप सोच सकते हैं कि उसके लिए कितनी असहज स्थिति हो सकती थी। किन्तु सोहनलाल जी तो एक दृढ़ संकल्प के व्यक्ति थे। अपने इरादे से टस से मस नहीं हुए। विवाह के अवसर पर भी खादी ही पहनी।

पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जैसे विद्वान भी द्विवेदी जी के काव्य की प्रशंसा इसलिए करते हैं कि वह गौरवयुक्त और गरिमापूर्ण है और उसमें कहीं भी अश्लीलता और अराष्ट्रीयता के दर्शन नहीं होते। अर्वाचीन हिन्दी साहित्य के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा था, "मैं तो आज के हिन्दी साहित्य को उन्नतिशील नहीं देखता, क्योंकि उसकी प्रवृत्ति शृंगार और स्पष्ट कहूँ तो अश्लीलता की तरफ़ अधिक होती जा रही है। यही प्रवृत्ति मेरे ख़याल में उसकी गिरावट का कारण बन रही है। उसमें से राष्ट्रीयता की दिन पर दिन कमी होती जा रही है। हाँ, इस विषय में मैं श्री सोहनलाल जी द्विवेदी को प्रशंसा अवश्य करूँगा, क्योंकि उनका जो भी काव्य मैंने पढ़ा राष्ट्रीयता से भरपूर था। ऐसे ही काव्यों की आज आवश्यकता है।"

1968 में कानपुर में आयोजित एक साहित्यिक समारोह में कविवर सोहनलाल द्विवेदी जी का अभिनंदन किया गया। इस समारोह में *सरस्वती* के संपादक पं. श्री नारायण चतुर्वेदी तथा डॉ. लक्ष्मीनारायण सुधांशु, श्रीयुत् श्रीप्रकाश प्रभृति विद्वान उपस्थित थे। अभिनंदनेय सोहनलाल द्विवेदी जी ने कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए कहा, "मेरी इष्टदेवी एकमात्र राम, कृष्ण, तिलक, गोखले, गाँधी की जननी भारतमाता है। मैं शत-शत जन्म धारण करके भी अपनी इष्टदेवी के ऋण से मुक्त नहीं हो सकता। मेरी लेखनी भारतमाता के वर्तमान और भविष्य की ही आराधिका है। मेरा जीवन और मेरी क़लम भारतमाता की सेवा में ही एकांत समर्पित हैं।" इस प्रकार भारत के प्रति उनकी अगाध निष्ठा थी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि अपनी प्रथम काव्य

रचना *भैरवी* के मंगलाचरण में सर्वप्रथम इसी माँ की वंदना की गई है–

वन्दना के इन स्वरो में
एक स्वर मेरा मिला लो
वंदिनी मां को न भूलो,
अर्चना के रत्न कण में
एक कण मेरा मिला लो।

वे विनोदी स्वभाव के थे। सहजता, सरलता, स्नेहशीलता और विनोदप्रियता के गुणों के साथ-साथ उनमें स्वाभिमान की भावना भी ग़ज़ब की थी। उनमें दंभ और अहंकार नहीं था, किन्तु स्वाभिमान और आत्म-सम्मान उनमें कूट-कूटकर भरा था। कोई लाभ या स्वार्थ उन्हें विचलित नहीं कर सकता था। उन्होंने स्पष्ट कहा था–

मुझे नहीं है लोभ राज्य के वरदानी वरदान का
मुझे नहीं है लोभ राज्य के सम्मानी सम्मान का,
मैं जनता का साथी हूँ, मैं कवि हूँ हिन्दुस्तान का।

ये मालवीय जी के भक्त थे, किन्तु कुछ बातों पर ये उनसे सहमत नहीं थे, जिसे वे शिष्टतापूर्वक कह देते थे। आचार्य श्यामसुंदर दास और आचार्य शुक्ल इन्हें बहुत मानते थे, किन्तु नई कविता पर उनके विचारों की विध न मिलने पर सशक्त किन्तु शालीन शब्दों में अपना दृष्टिकोण सम्मुख रखने में वे कभी नहीं हिचकिचाते थे। वे स्पष्ट वक्ता थे और सिद्धांतों से समझौता करना उन्होंने सीखा ही नहीं था।

उनके उदार व्यक्तित्व के संबंध में श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' ने एक घटना का उल्लेख कहते हुए लिखा है। 'भारत छोड़ो' आंदोलन के बीच कविवर द्विवेदी एक बार कुंडेश्वर (टीकमगढ़) ठहरे। अगले दिन उनकी सभा में कवि गोष्ठी जमी। चलते समय टीकमगढ़ के महाराज ने द्विवेदी जी को कुछ दक्षिणा देने का उपक्रम किया तो द्विवेदी जी ने पूछा, "यह क्या है?"

"आपकी विदाई।"

महाराज अपने दरबार में पधारनेवाले कवियों को विदा करते समय कुछ-न-कुछ देते थे, इसलिए स्वभावतः उनके मुँह से उक्त बात निकल गई।

"मेरी विदाई?" द्विवेदी चौंक पड़े, "महाराज क्षमा करें, मैं कोई भाट, भिक्षुक नहीं, जो विदाई लूँ। आपका स्नेह और अपनत्व ही बहुत है।"

द्विवेदी जी का यह प्रखर व्यक्तित्व उनकी काव्य रचनाओं में जा बजा उभरकर सामने आता है। एक स्थान पर वे कहते हैं–

मुझे न चाहिए संगी साथी,
मुझे न चाहिए अतुलित धन,

साथ रहे पेड़ों पत्तों का,
शीतल बहती रहे पवन।
लिखूं कर्म वीरो की गाथा,
कैसे वे होते बलिदान।
और फूंक दूं मृतक जाति में,
नूतन जीवन नूतन प्राण।

—विगुल से

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कविवर सोहनलाल द्विवेदी के बहुआयामी व्यक्तित्व में स्पष्टता और सहृदयता के गुणों का मणि कांचन योग ही था जो उनके अमर काव्य में यत्र-तत्र-सर्वत्र प्रतिबिम्बित होता है। वे विशुद्ध भाव से राष्ट्रवादी थे। उन्होंने लिखा भी है, 'मेरी राष्ट्रीयता भारत-भूमि की परिक्रमा करती है। भारतीय संस्कृति उसका प्राण है।'

सुमित्रानंदन पंत उनके काव्य से और उनके स्वभाव से प्रभावित होकर लिखते है—उनकी कविता सुविज्ञ साहित्यकारों की ही नहीं, जनता जनार्दन की भी प्रिय वस्तु है। उनकी सरल प्रसादमयी भाषा, सहज भावुकता, सुबोध कल्पना तथा विश्वास और भावनामयी देश-भक्ति जनता के लिए विशेषतः आकर्षक है।"

द्विवेदी जी के व्यक्तित्व को प्रभावित करनेवाली विभूतियाँ

कवि सोहनलाल द्विवेदी के व्यक्तित्व को प्रेरित करने और दिशा देने में जिन विभूतियों का योगदान रहा, उनमें उल्लेखनीय हैं—अध्यापक बलदेव प्रसाद शुक्ल, महात्मा गाँधी, गणेश शंकर विद्यार्थी, महामना मदनमोहन मालवीय जी तथा राय कृष्णदास जी। 1921 में किशोर सोहनलाल जब फ़तेहपुर के एंग्लो-संस्कृत स्कूल में थे तो वहाँ के हिन्दी अध्यापक पं. बलदेव प्रसाद शुक्ल ने उन्हें जीवन के एक निश्चित पथ पर अग्रसर किया। अमर बहादुर सिंह अमेरश ने *काव्य के इतिहास पुरुष : सोहनलाल द्विवेदी* में लिखा है—उस उथल-पथल के युग में युवक कवि सोहनलाल के हृदय में जो भावनाएँ उठीं, उन्हें मर्यादित, परिष्कृत और सुसंस्कृत करने का पूर्ण श्रेय पं. बलदेव प्रसाद शुक्ल को ही था, जिन्होंने उनमें आत्मबल, संयम एवं आदर्श जीवन के संस्कारों को उद्‌भूत किया।"

महात्मा गाँधी, निश्चय ही सोहनलाल द्विवेदी के आदर्श पुरुष रहे। द्विवेदी जी की समस्त रचनाओं में गाँधी का प्रभाव स्पष्टरूप से दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने अपनी प्रथम रचना *भैरवी* गाँधी जी को ही समर्पित की थी। 'गाँधी अभिनंदन ग्रंथ' के संपादन का सूत्रपात इन्होंने ही किया था। कालांतर में द्विवेदी जी द्वारा अपनी समस्त राष्ट्रीय कविताओं के संकलन का 'जय गाँधी' नामकरण भी उनके हृदय में निहित गाँधी-मूर्ति का साक्षात्कार कराता है।

गणेश शंकर विद्यार्थी के जीवन से उन्हें त्याग और बलिदान की प्रेरणा मिली विद्यार्थी जी का राष्ट्रीय पत्र 'प्रताप' युवकों और विद्यार्थियों में राष्ट्रीय भावना जाग्रत करने में अग्रिम भूमिका निभा रहा था। पत्र का नाम बच्चे-बच्चे की ज़बान पर था। विद्यार्थी जी के जोशीले भाषणों से सोहनलाल द्विवेदी जी अत्यधिक प्रभावित हुए। उनकी कविताओं में बलिदानी स्वर और अधिक प्रखर और मुखर हो गया। राष्ट्रीयता की जो प्रेरणा उन्हें विद्यार्थी जी से मिली, वह उनके पत्रकारिता और उनकी काव्य रचनाओं में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। **महामना मालवीय** जी से उन्हें भारतीय संस्कारों की शिक्षा प्राप्त हुई। द्विवेदी जी स्वयं स्वीकार करते हैं कि गाँधी जी ने यदि उन्हें सैद्धांतिक प्रेरणा दी, तो उसे व्यवहार रूप में लाने की प्रेरणा महामना मालवीय जी ने प्रदान की। मालवीय जी ने जब काशी विश्वविद्यालय में इनकी 'राणा प्रताप के प्रति' कविता सुनी तो आत्मविभोर होकर आशीर्वाद दिया, "मैं चाहता हूँ ऐसी कविता का एक कोने से दूसरे कोने तक प्रचार हो।" उनका आशीर्वाद अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। इस कविता ने कवि सोहनलाल द्विवेदी को 'राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। मालवीय जी से प्राप्त प्रेरणा के प्रति उनकी कृतज्ञता इन शब्दों में प्रकट हुई—

जी होता है, प्राण फूँकने वाली तुमको आग कहूँ,
अभागिनी भारत जननी का तुमको सौभाग्य कहूँ।
गला दिया तुमने तन को रो-रो आँसू के पानी में,
मातृभूमि की व्यथा हाय, हम सहते भरी जवानी में।

राय कृष्णदास जी से ही सोहनलाल द्विवेदी को बाल साहित्य लिखने की प्रेरणा मिली थी। इन्हीं के प्रयास से द्विवेदी जी का पहला बालगीत संग्रह *दूध बताशा* लीडर प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ, जिसकी इतनी धूम मची कि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं एवं प्रकाशकों से उन्हें नए-नए और रोचक बालगीत का अनुरोध प्राप्त होने लगा। कालांतर में वे 'बच्चों के महाकवि' बन गए।

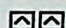
पं. सोहनलाल द्विवेदी को बिन्दकी के लोग प्यार से 'चाचा' कहते थे। परिवार के सभी लोग, बेटे, पौत्र-पौत्री, पास-पड़ोस के आबाल वृद्ध सबके चाचा थे। श्री राजेन्द्र राव उनकी वृद्धावस्था में उनसे मिलने गए। उनके रहने के कमरे का देखकर वे लिखते हैं—"एक अजीबोगरीब बिखराव है कमरे में। आले में दवाइयों का ढेर लगा है और उन्हीं के पास पद्मश्री का अलंकरण, कुछ तस्वीरें, एकआध कैलेंडर, कपड़े, ब्रीफ़केस, किताबें आदि हैं। हमारे जाने पर 'बाहर जाड़े की धूप में नीम के पेड़ के नीचे चारपाई बिछाई गई। उन्हें सहारा देकर लाया गया। पौत्री अनुभा ने खादी की उजली टोपी उनके सिर पर रखी तो ऐसा लगा जैसे किसी वानप्रस्थी वृद्ध राजा को फिर से ताज पहना दिया गया हो। राणा प्रताप कविता की चर्चा छेड़ते

ही उनमें उत्साह जाग उठा। ...सहसा उनका स्वर मंद हो गया। वाणी अनियंत्रित होने लगी। वे थक गए हैं। अंतिम छंद सुनाते हुए लगता है उन पर ज़ोर पड़ रहा है। दिल से आह उठती है, ...कहाँ है कवि सम्मेलनों का बेताज बादशाह। कहाँ है मेघ गर्जना सी थर्रा देने वाली वाणी?"

श्री राजेन्द्र राव ने गांधी जी के संबंध में उनसे पूछा, 'चाचा क्या गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों में आपकी अब भी आस्था है? वे बोले 'हाँ'।

इस प्रकार अंत तक वे गाँधीजी के परम भक्त रहे। किन्तु गांधीजी के पथभ्रष्ट और सत्ता लोलुप अनुयायियों को फटकार लगाने से भी वे नहीं चूके—

गांधी की जय बोलो मत, बन गांधी के अनुयायी
क्या तुम इसके योग्य आज हो? सच कहना मेरे भाई।



2

काव्य रचनाएँ

द्विवेदी जी राष्ट्रीय चेतना के कवि थे। यह वह समय था जब महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सारे भारत में स्वतंत्रता आंदोलन की लहर दौड़ रही थी। विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए क्या किसान क्या मज़दूर, क्या वकील और क्या डाक्टर, क्या छात्र और क्या शिक्षक, सभी आज़ादी की लड़ाई में किसी-न-किसी रूप में भाग ले रहे थे। कवि और लेखक भी भला अपनी वाणी और लेखनी को कैसे रोक सकते थे। कविवर सोहनलाल द्विवेदी जी राष्ट्रनायक महात्मा गाँधी के परम प्रशंसक और अनुयायी थे। महात्मा गाँधी की वाणी को दूर-दूर तक काव्य के सरस माध्यम से पहुँचाने का महनीय कार्य द्विवेदी जी ने पूरी सफलता से किया। कमलादास त्रिपाठी ने द्विवेदी के संबंध में ठीक ही कहा है, "द्विवेदी काव्य के समूचे भाव-चक्र की धुरी है–राष्ट्र धर्म।" इनका समस्त काव्य राष्ट्र-प्रेम से ओत-प्रोत है। अपनी मातृभूमि के उपासक द्विवेदी जी *वाल्मीकि रामायण* के इस सूत्र से 'जननी जन्मभूमि स्वर्गादपि, गरीयसी' अर्थात् जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से महान हैं,' पूर्णतः आप्लावित थे। आयु भर वे अपनी मातृभूमि के उपासक बने रहे।

डॉ. श्याम सिंह शशि के शब्दों में, "द्विवेदी जी वीणा-वादिनी के वरद पुत्र थे, जिन्हें समस्त भारतीय वाङ्मय से अनुराग था, लेकिन महात्मा गाँधी के अनन्य भक्त होने के कारण उनके काव्य में भारत की आत्मा मुखरित हुई है। उनकी पीयूषवर्षिणी वाणी ने हिन्दी की काव्य भूमि को सींचकर अमृत्व प्रदान किया है।"

"आधुनिक हिन्दी कविता के क्षेत्र में पं. सोहनलाल द्विवेदी का विशेष स्थान है। इनकी कविता सीधे हृदय से निकलती हुई हमारे कर्म को स्पर्श करती है और चिरस्थायी प्रभाव उत्पन्न करती है। श्री द्विवेदी जी को जीवन के मर्म स्पर्शी पक्ष की पूरी परख है। इनकी सफलता का सबसे बड़ा कारण भी यही है। वे अपनी कविता द्वारा जनता को रसमग्न कर देते है।"

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' तो उनके काव्य पर, उनकी जनसुलभ अभिव्यक्ति पर इतने मुग्ध थे कि उन्होंने बेबाक शब्दों में कविवर द्विवेदी जी को 'जनकवि' कहा। उनकी दृष्टि में जो कवि जनता की ... भावनाओं को समझ सके, उन्हें वाणी दे सके वही जनकवि होने का अधिकारी है। वे लिखते हैं–

"जनता के पास भावना होती है शब्दावली नहीं होती, जनता के पास आकांक्षा होती है, उसकी पूर्ति के उपाय का ज्ञान नहीं होता। जो जनता की मूक भावनाओं को शब्द दे, वही जनकवि है, जो जनता को आकांक्षा की पूर्ति का संकल्प दे वही जन चिन्तक है और जो उस संकल्प के साथ जनता को साथ ले चले, वही जन नेता है। सन 1920 के तूफानी दिनों के बाद लम्बे सांप्रदायिक दंगों के वातावरण से दबी-घुटी जनता के मन में जो भावना उमड़ रही थी उसे-हिन्दी की बात कहता हूँ—सर्वोत्तम शब्दावली दी भाई सोहनलाल द्विवेदी ने और यहीं मैं उन्हें जनकवि मानता हूँ—राष्ट्र की आत्मा का कवि।" (*एक कवि : एक देश*, पृ. 67)

कविवर सोहनलाल द्विवेदी जी की रचनाओं को हम कालक्रम की दृष्टि से दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—एक स्वतंत्रतापूर्व की रचनाएँ, दूसरी स्वातंत्र्योत्तर रचनाएँ।

1. स्वतंत्रतापूर्व की रचनाएँ

द्विवेदी जी की काव्य रचना का श्री गणेश यद्यपि बालगीतों से होता है, किन्तु जब वे दसवीं कक्षा के छात्र थे, तभी उन्होंने आचार्य शंकर की प्रसिद्ध रचना *चर्पट-पंजरिका* का पद्यानुवाद *मोह मुदगर* नाम से किया था, जो प्रकाशित भी हुआ। इसे उनकी प्रथम काव्य रचना माना जा सकता है। इस प्रकार बाल्यकाल से ही उनमें काव्य प्रतिभा के अंकुर प्रस्फुटित हो रहे थे। 1920 ई. से ही उनके बालगीत समकालीन बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगे थे। मैथिलीशरण गुप्त जी ने उनके विषय में लिखा है, "हमलोगों में से आप ही बाल साहित्य के जनक हैं।" उनके प्रथम पाँच संग्रह बालगीतों के ही हैं—*दूध बताशा* (1930 ई.), *पाँच कहानियाँ* (1940 ई.) *सात कहानियाँ* (1940 ई.), *मोदक* (1940 ई.) और *किसान* (1940 ई.)। वास्तव में उन्हें काव्य जगत में जो ख्याति मिली, वह उनके राष्ट्र गीतों के विभिन्न संकलनों ने दी है। उन्हीं गीतों से उनकी धूम सारे भारत में मची। जिस प्रकार तुलसी की उपासना का केन्द्र बिन्दु श्रीराम थे, उसी प्रकार कविवर द्विवेदी की आस्था के केन्द्र बिन्दु 'गाँधी जी' थे। 1930 ई. में जब उन्होंने दीक्षांत समारोह में महात्मा गाँधी को 'खादी गीत' समर्पित किया, तभी से वे 'गाँधी जी के छोने' और 'राष्ट्रकवि' के रूप में उभरकर सामने आए।

राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत इन्होंने अपनी प्रसिद्ध काव्य रचना *भैरवी* गाँधी जी को समर्पित करते हुए लिखा—

'बापू!
"आज से एक युग पहले अपनी प्राथमिक रचना 'खादी-गीत' आपके हाथों में अर्पित की थी। इसे मैं आपके पावन स्पर्श का प्रसाद ही

मानता हूँ कि वह इतनी लोकप्रिय हुई। आज फिर खादी-गीत तथा अन्य कविताओं के संकलन 'भैरवी' को आपके पुण्य-पाणि में समर्पित करता हूँ। यदि एक भी गीत अच्छा बन पड़ा हो, तो यह प्रयास सफल मानूँगा।"

—सोहनलाल द्विवेदी

यहाँ हम उनकी स्वतंत्रता पूर्व की कुछ काव्य कृतियों पर विचार करेंगे। बालगीतों और उनके द्वारा संपादित ग्रंथों पर प्रकाश अलग से डाला जाएगा।

1. *भैरवी* (1941)—यह एक प्रकार से कवि की प्रथम राष्ट्रीय रचना है। इसमें 37 गीत संकलित हैं। प्रथम गीत 'पूजा गीत' इनका सबसे लोकप्रिय गीत है, जो एक समय जन-जन की जिह्वा पर मुखरित था—

वंदना के इन स्वरों में एक स्वर मेरा मिला लो।
वंदिनी माँ को न भूलो
राग में जब मत्त झूलो
अर्चना के रत्न कण में एक कण मेरा मिला लो।
जब हृदय का तार बोले
शृंखला के बंद खोले
हो जहां बलि शीश अगणित, एक शिर मेरा मिला लो।

इनमें कई गीतों के केन्द्र बिन्दु स्वयं महात्मा गाँधी है। गाँधी जी को समर्पित 'खादी-गीत' इस संकलन का एक प्रकार से प्राण है—

खादी के धागे-धागे में,
अपनेपन का अभिमान भरा
माता का इसमें मान भरा
अन्यायी का अपमान भरा।

कहना न होगा कि युवा कवि सोहनलाल को राष्ट्रीयता की उच्च पगडंडियों तक चढ़ाने में इस गीत का सबसे बड़ा योगदान है।

प्रो. राममूर्ति त्रिपाठी तो यहाँ तक कहते हैं कि "यदि द्विवेदी जी ने केवल यही एक गीत भी लिखा होता तो वह उनके अंतस् के राष्ट्रीय रूप को सदा प्रकाशित करने के लिए पर्याप्त होता। श्री जैनेन्द कुमार का कहना था, "भैरवी की कविताएँ" भारतीय राष्ट्रीयता की गति की ताल पर रची गई हैं। उनमें सामयिकता है। व्यथा जगाने से ऊपर वे प्रभाव भी देना जानती हैं। आत्म संस्कार से अधिक प्रवृति-जागरण उनका लक्ष्य है।" 'युगावतार गाँधी' को मैं द्विवेदी जी की कालजयी रचना के रूप में देखता हूँ। कवि ने गाँधी को एक युग पुरुष ही नहीं, एक ऐसे सर्वमान्य देव पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया है जिसके मात्र एक संकेत पर करोड़ों प्राण अपने

आपको न्योछावर करने के लिए उठ खड़े हो जाते हैं। निःसंदेह, वे बे-ताज के बादशाह से भी कहीं बढ़कर है। इतने अधिक अनुयायियों वाले जननायक का उदाहरण विश्व में ढूँढ़े से भी मिलना कठिन है। कवि ने इस कविता में जो जादू डाल दिया है, जो आकर्षण पैदा किया है, उससे गाँधी के व्यक्तित्व में अपूर्व दिव्य गुणों के दर्शन सहज ही हो जाते हैं जो, किसी चमत्कार से कम नहीं लगते। यहाँ गाँधी एक व्यक्ति नहीं, युगपुरुष हैं, जिनके पदचिह्नों पर चलने के लिए करोड़ों आस्थावान भारतीय पंक्ति बाँधे खड़े हैं। वे सबके प्रिय हैं, विश्वसनीय हैं, अनुकरणीय हैं और आदरणीय हैं–

चल पड़े जिधर दो डगमग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि
पड़ गए कोटि दृग उसी ओर।

× × ×

युग-परिवर्तक, युग संस्थापक
युग संचालक, हे युगाधार!
युग निर्माता, युग मूर्ति! तुम्हें,
युग-युग तक युग का नमस्कार।

यह रचना कवि की एक अमर कृति के रूप में सदैव जीवित रहेगी।

भैरवी में संकलित 'राणा प्रताप के प्रति' उनकी ऐसी ही एक श्रेष्ठ रचना है, जिसे पढ़कर नवयुवकों में राष्ट्रप्रेम का ज्वार उमड़ पड़ता है–

"सुप्रसिद्ध साहित्यकार कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर इनकी इस कविता को पढ़ने में ऐसे लीन हुए कि अपने छात्रों तक को भूल गए। अध्यापन करना छोड़ कविता की जोशीली पंक्तियाँ पढ़कर ऐसे जोश में भर गए कि हाथ हिलाने लगे। चिल्ला-चिल्लाकर पढ़ने लगे।"

कल हुआ तुम्हारा राज तिलक
बन गए आज ही बैरागी?
उत्फल्ल मधु-मंदिर सरसिज में
यह कैसी तरुण अरुण आगी?
क्या कहा कि–
तब तक तुम न कभी
वैभव सिंचित शृंगार करो,
क्या कहा, कि–
जब तक तुम न विगत
गौरव स्वदेश उद्धार करो।

इस संकलन में 'किसान' नाम की कविता पर भी द्विवेदी जी को सर्वत्र प्रशंसा और यश की प्राप्ति हुई। यह कविता श्रोताओं के अंतस को छू जाती है। अनेक समारोहों में इसे बार-बार पढ़ा गया।

ये नूपर की रुन-झुन, रुन-झुन
ये पायल की छम-छम-छम धुन
ये गमक मीड़, मीठी गुन गुन
ये जन समूह की गति सुनमुन
ये मेहमान ये मेज़बान
साकी सुराही का समान
ये जलसा महफ़िल समाँ तान
ये कहते हैं किस पद गुमान?
यह तेरी दौलत पर किसान।
वह तेरी मेहनत पर किसान।
वह तेरी रहमत पर किसान
वह तेरी ताकत पर किसान।

भैरवी में बच्चों के लिए प्रयाण गीत भी है। 'प्रभाती' 'बुद्ध देव के प्रति' 'तरुण तपस्वी' तथा 'तुलसी दास' जैसी प्रेरक रचनाएँ भी हैं। राष्ट्रीय जागरण काल में *भैरवी* की सर्वत्र विद्वतजन द्वारा मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई। जैनेन्द्र जैसे मूर्धन्य कथाकार ने कहा, "*भैरवी* की कविताएँ भारतीय राष्ट्रीयता की गति की ताल पर रची गई है। उनमें सामयिकता है।" कविवर द्विवेदी 'माँ' की मुक्ति में वाणी का ही नहीं, प्राणों का भी दान करने के लिए आंदोलनों की आग में कूद पड़ने के लिए उद्यत हैं। कारागारों की हथकड़ियों को विजय कंकण की तरह धारण कर चुके द्विवेदी जी कहते हैं–

कर में बाँधो, विजय कंकण-सी उर में आत्म-शक्ति लाओ,
जन्मभूमि के लिए शलभ-सा मर जाना, हाँ सिखलाओ।

कवि ने इस संकलन का शीर्षक *भैरवी* देकर राष्ट्र के जागरण का उद्‌बोधन किया है। सुप्त राष्ट्र को संवोधित करता हुआ कवि कह रहा है–

जब सारी दुनिया सोती थी, तब तुम ने ही उसे जगाया
दिव्य ज्ञान के दीप जलाकर, तुमने ही तम दूर भगाया
तुम्हीं सो रहे दुनिया जगती, पर कैसा पद है मतवाले
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी जागो मेरे सोनेवाले।

अहिंसा के सैनिकों का वह प्रयाण गीत कितना विलक्षण, अद्‌भुत और रोमांचकारी है। उनके पास न कोई शस्त्र है, न कोई अस्त्र है, न अन्न है, न जल है। फिर भी किस जोश और शान से वे बढ़े जा रहे हैं–

न हाथ एक शस्त्र हो
न अन्न नीर वस्त्र हो
हटो नहीं, डटो वहीं, बढ़े चलो, बढ़े चलो।

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी जी ने *भैरवी* की प्रशंसा में लिखा था, "*भैरवी* में जो वर्णन शैली है, श्रद्धा और भक्ति का सहज सरल वेग है, जो झरने के समान प्रसन्न है, तूफ़ान के समान उद्दाम नहीं, वह मुझे बड़ा आकर्षक जान पड़ता है। खादी गीत, बापू और मालवीय जी आदि के संबंध में जो रचनाएँ हैं, उनमें कविता का वास्तविक स्वरूप पकट हुआ है। वहाँ कविता खिले हुए फूल के समान सुंदर है।"

भैरवी ने न केवल अपने समकालीन लेखन को प्रभावित किया, अपितु आंदोलित भी किया। यह तत्कालीन सामाजिक चेतना को कविता के माध्यम से सृजनात्मकता से जोड़ने का एक सार्थक ऐतिहासिक प्रयास था। श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' का यह कथन श्री द्विवेदी जी के संबंध में बहुत ही सटीक है कि द्विवेदी जी युग के प्रति वफ़ादार है।

"जो कवि अपने आपके प्रति सच्चा रहता है वह सबके प्रति सच्चा रह सकता है। सोहनलाल जी को मैं युग कवि मानता हूँ। गाँधी जी ने युग की आत्मा को प्रकाशित किया है। इसलिए ये युगावतार हैं। सोहनलाल जी ने युग के स्वर में स्वर मिलाया है। अतः वे युग कवि हुए।...सोहनलाल जी ने जितना गाँधी के प्रभाव को ग्रहण किया है, उतना शायद प्रकाश को नहीं। उनका कवि गाँधी जी से जितना प्रभावित है, उतना शायद उनका व्यक्ति नहीं। पर क्या कवित्व व्यक्तित्व से भिन्न रह सकता है?"

2. *वासवदत्ता* (1942)–कविवर सोहनलाल द्विवेदी की एक महत्त्वपूर्ण रचना है। कवि स्वयं भी इसे अपनी उत्कृष्ट रचना मानते है। वे पुस्तक के आमुख में लिखते हैं। "वासवदत्ता मुझे उत्कृष्ट रचना इसलिए जान पड़ती है कि इसके पढ़ने के पश्चात हमारी वासना नीचे दबती है और आत्मा ऊपर उठती है। बारंबार इस रचना को पढ़ने का अर्थ यही होगा कि जब कभी जीवन में कोई 'वासवदत्ता' हमारे सामने उसी हावभाव और कटाक्ष से यौवन समर्पित करेगी, हम एक बार सहज हो जाएँगे। यह कथानक उस समय हमें गौतम के गौरव को प्राप्त करने का प्रलोभन ही नहीं देगा, प्रत्युत आत्म शक्ति भी। वासवदत्ता के कवि का पक्ष है कि देश स्वतंत्र तो होगा ही इसमें संदेह कैसा! कवि अपेक्षा करता है कि कवि समाज को वे रचनाएँ भी दे, जो उसके समाज, जाति, राष्ट्र के मेरुदड' आदर्श को सीधा रख सके। युग

ने जो करवट बदली, *भैरवी* उसका राजनीतिक पक्ष है, *वासवदत्ता* उसका सांस्कृतिक। एक शरीर है, तो दूसरी आत्मा, जिनके समन्वय से ही पूर्ण मानवता की प्राप्ति संभव है।"

द्विवेदी जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि *भैरवी* के साथ मेरी रचनाओं का एक युग समाप्त होता है। *वासवदत्ता* में मेरी रचनाओं का नवीन युगारंभ है। *भैरवी* में जहाँ इस युग की गतिविधि एवं प्रगति का चित्रण है, *वासवदत्ता* में वहाँ युग-युग की भारतीय संस्कृति को अंकित करने का प्रयत्न है।

गौतम ने संयमपूर्वक *वासवदत्ता* के प्रणय निमंत्रण को ठुकराकर संयत काम का उदाहरण प्रस्तुत किया है। गौतम की यह चारित्रिक दृढ़ता एक आदर्श प्रस्तुत करती है–

देवी, क्या चाहती हो?
सावधान होकर ज़रा सोचो तो
कहती क्या? किससे फिर?
आज मैं अतिथि नहीं बनूँगा इस गृह में
इतना कह,
शांति चित चले गए आर्य पुत्र।

इस कविता का आशय यही बताना है कि उच्छृंखल कामाचार ग़लत है। असंयत काम पर संयम की विजय सबसे बड़ी विजय है।

इस संग्रह में *वासवदत्ता* के अतिरिक्त 'उर्वशी' 'सरदार चूड़ावत' 'कर्ण और कुंती', 'एक बूँद', 'कुणाल', 'भिक्षाप्राप्ति' तथा 'महाभिनिष्क्रमण' शीर्षक आठ प्रबंधात्मक कविताएँ हैं। 'उर्वशी' में अर्जुन-उर्वशी संवाद है। इसमें अर्जुन के दृढ़ निश्चय को चित्रित किया गया है। वे उर्वशी के प्रणय-निमंत्रण को अशिष्ट और अनैतिक मानते हुए कहते हैं–

संभव नहीं है यह कार्य आर्ये।
सर्वथा अनार्य!
दुष्कार्य मेरे लिए।

सरदार चूड़ावत की पत्नी ने अपना सिर काटकर पति को अपने प्रणय-बंधन से मुक्ति दिलाई, जिससे कि वह अनन्य भाव से मातृभूमि की रक्षा कर सके। 'कर्ण और कुंती' में पुत्र और माता की विवशतामयी व्यथा का आख्यान है। 'कुणाल' में सौतेली माँ के प्रणय-प्रस्ताव को जिस दृढ़ता से युवराज कुणाल ठुकराता है, वह वंदनीय है।

माता क्या कहती हो?
किधर आज बहती हो?
होगा मुझसे न यह अधर्म कभी।

इसी प्रकार 'भिक्षाप्राप्ति' में सुजाता गौतम बुद्ध को अपनी निर्धनता का दान देती है। महाभिनिष्क्रमण में सिद्धार्थ (बुद्ध) के मधु-ऋतु में गृह-त्याग की कथा है। इसमें राजकुमार सिद्धार्थ का अंतर्द्वन्द्व ही कविता का मेरुदंड है। 'भिक्षाप्राप्ति' का महाभिक्षु धनाधिपतियों से हताश होकर अकाल पीड़ित लोंगो में लोक संग्राहक बन जाता है और भिक्षुणी के सहयोग से अपने उद्देश्य की पूर्ति करता है। यहाँ युग की जन-जागृति के स्वर सुनाई देते हैं। भिक्षुणी की इस उक्ति में पूंजीवादी व्यवस्था के प्रति इस युग की भारतीय जनता की प्रतिक्रिया अभिव्यक्ति पाती है—

मेरे ही धन-धान्य,
लूट-लूट करके इन लुटेरों ने
खड़ा किया प्रासाद, उच्च भवन
ध्वजा, कलश, तोरण और वंदी गान।

वास्तव में, वासवदत्ता में संकलित सभी कविताओं का उद्देश्य मनुष्य का नैतिक उत्थान है। इसके अभाव में कोई भी राष्ट्र भले ही स्वतंत्र हो जाए, वह उन्नति के शिख पर नहीं पहुँच सकता। कवि ने आमुख में कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर को उद्धृत करते हुए स्पष्ट किया है—एक वाक्य में उदात्त भावों को सद्विवेक, सद्विचार, सद्भावना को जगाना ही काव्यादर्श है। जो कला, कविता हममें अच्छे संस्कारों को जाग्रत न कर सके, समझना चाहिए, वह अपने आदर्शों से च्युत है। मैं समझता हूँ इस संबंध में दो मत नहीं हो सकते। कविवर सोहनलाल द्विवेदी के काव्य की आत्मा सद्विचारों के आदर्शों की ही अभिव्यक्ति है, जो राष्ट्रोत्थान के सद्कार्यों में अनुपूरक के रूप आबद्ध है।

डॉ. सत्येन्द्र ने *वासवदत्ता* के संबंध में अपनी स्पष्ट टिप्पणी करते हुए कहा है कि *वासवदत्ता* का कवि 'ऊहा' का कवि नहीं। वह न तो ऊँची उड़ाने ही भरता और न उसे कल्पना की कलाबाजी में कवि कर्म ही मिलता है। *वासवदत्ता* का कवि रहस्योन्मुख अस्पष्ट प्रणाली का पोषक नहीं। वह युग-युग का संदेश देने भी नहीं आया। वह तो युग-युग को युग-युग के लिए रखना चाहता है। वह भी भारतीय युग-युग को, जहाँ इतिहास अपनी संकरी गलियों को खोदकर, प्राचीन धूल मिट्टी का मोल नहीं आँक रहा, वरन् संस्कृति का तरल रूप मानव के द्वारा अभिव्यक्त हो उठा है।

11 अक्टूबर 1940 को रेडियो दिल्ली से एक कवि सम्मेलन प्रसारित हुआ, जिसमें सर्वश्री निराला, सुमित्रानंदन पंत, रामकुमार वर्मा, हरिवंश राय बच्चन, अज्ञेय, कोकिल जी, हृदयेश जी और सोहनलाल द्विवेदी जी ने कविता-पाठ किया। उक्त कवि सम्मेलन की समीक्षा करते हुए पांडेय बेचन शर्मा उग्र ने *हिन्दुस्तान* में लिखा 'मेरे मत से सर्वश्रेष्ठ रचना जो पढ़ी गई वह थी पं. सोहनलाल जी द्विवेदी की वासवदत्ता

...निराला जी की 'तुम और मैं' को भी एक नज़र से सर्वश्रेष्ठ कहा जा सकता है, मगर कुल मिलाकर मैदान 'वासवदत्ता' के ही हाथ रहता है।

वासवदत्ता के प्रति अपनी शुभाशंसा व्यक्त करते हुए महाकवि मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं कि सोहनलाल का कवि स्वच्छंद होकर भी संस्कारशील है और यथार्थवादी होकर भी आदर्शपरायण।

3. *कुणाल* (1942 ई.)–*वासवदत्ता* में संकलित 'कुणाल' कविता इस खंड काव्य का आधार है। अशोक महान के पुत्र *कुणाल* के उदात्त चरित्र को लेकर इस आख्यान की रचना हुई है। सोहनलाल द्विवेदी जी इस काव्य की रचना के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखते है कि "एक मात्र मेरा उद्देश्य यह है कि यह समाज के युवकों के चरित्र निर्माण में सहायक हो। सुरुचिपूर्ण पाठकों को यह प्रयास संतोष दे सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।"

श्री नंददुलारे वाजपेयी जी ने कुणाल की भूमिका में लिखा है मेरा सदैव यह विश्वास रहा है कि हिन्दी को नवीन प्रवर्तकों की जितनी आवश्यकता है, उससे कम आवश्यकता भाषा और साहित्य को प्रौढ़ता प्रदान करनेवाले कवि हृदय रसज्ञों को नहीं है।...उनके कुणाल काव्य को पढ़ लेने के पश्चात् मेरी यह धारणा और दृढ़ हो गई है कि राष्ट्रीयता का अनन्य प्रेमी यह वीरोपासक कवि हिन्दी में राष्ट्रीय काव्य की कमी पूरी करने के लिए ही सौभाग्यवश हमारे साहित्य में आया है। नंददुलारे वाजपेयी जी ने इसकी लंबी भूमिका लिखी है। वे काव्य का मुख्य रस 'शांत' ही मानते है। 'करुण' रस की धारा भी इसमें बही है, किन्तु संपूर्ण काव्य का पर्यवसान शांत में ही हुआ है।

इस खंड काव्य में 16 सर्ग हैं। अशोक-पुत्र कुणाल युवक है और वह अपनी सौतेली माता तिष्यरक्षिता के प्रणय-प्रस्ताव को ठुकरा देता है। तिष्यरक्षिता युवती और सुंदर है, जो कुणाल के समवयस्क भी है। कामांध उस माँ का चित्रण द्विवेदी जी करते हुए कहते हैं *'वश हो अनंग के कुसुमायुध ने कुसुम वाण छोड़ा था उस पर।* रानी अपने अतुलनीय लावण्य और सौन्दर्य को तिरस्कृत किए जाने को सहन नहीं कर पाती और प्रतिशोध की ज्वाला उसके अंतर्मन पर धधकने लगती है। वह कैकेयी की भाँति अशोक से एक सप्ताह के लिए साम्राज्ञी पद प्राप्त कर लेती है। वह तक्षशिला के शासक पद पर नियुक्त कुणाल को अयोग्य ही घोषित नहीं कराती उसे अपराधी होने के कारण उसकी आँखें निकालकर उसे देश से निर्वासित करने की आज्ञा भी देती है। कुणाल इसे सहर्ष स्वीकार कर अपनी पत्नी कांचना के साथ स्वयं ही राज्य त्याग देता है। दोनों वीणा और भिक्षा पात्र हाथों में लेकर अन्य स्थानों पर घूमते गाते जीवनयापन करने लगते है। कई वर्ष बाद, वे एक दिन पाटलिपुत्र पहुँचते हैं। सम्राट अशोक वृद्ध हो चुके होते हैं। शायद उन्हें अपने पुत्र और पुत्र वधू की स्मृति तक नहीं रही हो। गायक भिक्षकों के रूप में वे दोनों राजभवन में

उपस्थित होते है। अकस्मात् सारा रहस्य खुल जाता है। अशोक कुलकलंकिनी रानी को मृत्युदंड देने के लिए उद्यत हो जाते है, किन्तु कुणाल माँ के लिए पिता से क्षमायाचना करके अशोक को शांत और संतुष्ट कर देते हैं। कुणाल का राज्याभिषेक करके अशोक महान स्वयं काषाय ग्रहण करके भिक्षु बन जाता है।

इस खंड काव्य की उल्लेखनीय विशेषता मानवीय संवेदनाओं में निहित है। पात्रों का चरित्र-चित्रण आश्चर्यजनक दृष्टि से उच्च कोटि का और संवेदनापूर्ण है। सामाजिक चुनौतियों, मानव स्वभाव आदि का सूक्ष्म विश्लेषण कवि की समाज और व्यक्ति चेतना के साथ-साथ राष्ट्र-चेतना को भी मुखरित कर देता है। कवि स्वयं कहता है–"इस प्रबंध को लिखने का एकमात्र मेरा उद्देश्य यह है कि यह समाज के युवकों के चरित्र-निर्माण में सहायक हो।"

नन्द दुलाने वाजपेयी का यह कथन बड़ा ही समीचीन है, "मानसिक स्थितियों के चित्रण में भी कवि की निपुणता उल्लेखनीय है। तिष्यरक्षिता के चरित्र में मानसिक संघर्ष और मनोगतियों का अच्छा निरूपण हुआ है। तरुणी, राजमहिषी और व्यभिचारिणी का संयुक्त स्वरूप अंकित करने में स्वभावतः कठिनाई थी, किन्तु फिर भी कवि ने इस चरित्र को अच्छी रूप-रेखा दी है।"

कुणाल सारी घटना को विधि का विधान मानकर तिष्यरक्षिता को ग्लानिमुक्त करते हुए कहते हैं–

न जननी इसमें था कुछ दोष,
इसी विधि था विधि को संतोष।
न होता तप मेरा यूं पूर्ण,
न भरता सुख से इतना कोष।

वर्तमान युग में भी इस पुरातन आख्यान को काव्य का माध्यम बनाने का उद्देश्य कथा-विन्यास में समकालिक चेतना का प्रभाव दर्शाना है। इससे भारतीय मूल्यों का पुनर्प्रतिष्ठापन हो सके, यही कवि का मंतव्य है।

इस खंड काव्य के अंतर्मन में भी राष्ट्र की पराधीनता के प्रति ग्लानि की भावना मुखरित होती दीख पड़ती है–

पराधीनते। सर्वनाश हो तेरा जग में
कुछ न सोचने देती तू मानव को मन में।

(*कुणाल*, निर्वासन सर्ग)

अस्तु कुणाल उन उदात्त जीवन-मूल्यों का आख्यान है, जिन्हें कवि की तत्कालीन राष्ट्र-चेतना का ही संपोषक समझना चाहिए।

डॉ. आनंदप्रकाश दीक्षित भी यही कहना चाहते हैं कि *कुणाल* अतीत की कथा अवश्य है, परंतु वर्तमान से विलग नहीं है और न ही स्वयं रचनाकार के अंतर

व्यक्तित्व से अप्रभावित। आधुनिक युग में भी इस पुरातन आख्यान का ग्रहण लेखक की अतीतोन्मुखी पलायनवृत्ति का परिणाम नहीं है, बल्कि इसके विपरीत कथा विन्यास में उसकी समकालिक चेतना का ही प्रभाव अंकित है।

4. *चित्रा* (1943)—अपने यौवन काल में कवि की अंतर्मुखी भावनाएँ भी अभिव्यक्ति के लिए शब्दों में उतरकर संवेदनाओं को जन्म देती है और प्रकृति सौन्दर्य तथा यौवनसुलभ प्रणयोन्माद के भावों की रचना करती है। इस वयःसंधि की इनकी प्रसिद्ध रचना है—*चित्रा*। स्वतंत्रता से पूर्व की इस कृति में 'तुलसीदास', 'बोधिसत्व' और 'बुद्ध के प्रति' कविताओं को छोड़कर सभी गीतों में कवि की वृत्ति प्रायः अंतर्मुखी रही है। ग्राम-कन्या, ग्राम-वधू सरल, अल्हड़ ग्राम जीवन की प्रकृति का दिग्दर्शन कराते हैं। इनमें प्रसाद, महादेवी वर्मा और मैथिलीशरण गुप्त की शैली का आभास भी देखने को मिलता है। चित्रा में 48 गीत हैं। इनमें प्रणय, प्रेम-सौन्दर्य और माधुर्य एवं उपालंभ के स्वर कवि के रोमानी भावों को वाणी देते प्रतीत होते हैं। प्रतीक्षा की एक घड़ी देखिए—

ढल चली है आज जीवन सांध्य,
फिर भी वे न आए
क्या सतत असफल रहेंगे, फूल जो मैंने सजाए?
कब तलक बैठा रहूँ मैं, रात में दीपक जलाए?
जल चुकी जब वर्तिका, कैसे सकेगी फिर ठहर ये?
कब मिलन के क्षण बनेंगे, चिर प्रतीक्षा के प्रहर में?

संवेदनशील मन मानस जब भावनाओं को अभिव्यक्ति देता है तो शब्द स्वतः दौड़े चले आते हैं और कल्पना के वेग में वे जिस सरस और रागात्मक वृत्ति का प्रस्फुटन करते है, वे ही मन के गीत होते हैं। *चित्रा* में जहाँ प्रकृति चित्रण है, वहीं प्रेम का संगीत भी है। 'लहरों के प्रति' कवि इतना संवेदनशील हो गया कि उसका कल्पना-जगत एक से एक उपमान खोजकर इसके सौन्दर्य को भौतिक से दिव्य रूप दे देता है। लहरों के स्वभाव में वह आकांक्षाओं के दर्शन करता है।

'लहरों के प्रति' कविता में जीवन का एक सुंदर चित्र उकेरा गया है। लहरों के जीवन में मानव-जीवन का उत्थान-पतन क्षण-क्षण व्याप्त है। कवि ने इसका मानवीय जीवन से कितना सादृश्य स्थापित किया है। देखिए—

आकांक्षा-सी ऊपर उठकर,
प्रार्थना सदृश नीचे गिरकर।
यह शिलाखंड में कौन लेख,
लिखती रहती है निशिवासर?
पल में उठती, पल में गिरती

यह कैसा है, उत्थान-पतन
करती रहस्य क्या उद्‌घाटन
है ऐसा ही अस्थिर जीवन।

मधुर और सरस भावों के साथ कला का कितना सुंदर सामजंस्य उनके काव्य में दृष्टिगोचर होता है। शब्दों का ध्वन्यात्मक तारतम्य तो देखते ही बनता है–

अपने ही जैसा कर दो यह मेरा मानस भी सरल सरल,
कोमल कोमल, निर्मल निर्मल, उज्ज्वल उज्ज्वल, शीतल-शीतल।

'रिमझिम' की ये पंक्तियाँ मानो रीतिकालीन कवि घनानंद की इन पंक्तियों–

परकारज देह को धारे फिरो
परजन्य यथार्थ है दरसो,

से होड़ ले रही हो।

ले आओ मेरे ये आँसू
बरसा दो उन चरणों में
जीवन हिम कण चढ़ा दिया है
जिनकी कंचन किरणों में।
उस प्रदेश में जाकर बरसो
हे पर दुःख-कातर नव घन।
जहाँ छा रहे हो निर्मोही
अपलक नयनों के चिन्तन।

आँसू की यह कथा कितनी सार्थक है, देखिए–

झुलसने लगता है जब गात
तुम्हीं ले आते हो बरसात
तुम्हारी छाया में दिन-रात
झरा करता है अश्रु-प्रपात।

चित्रा के ये चित्र निश्चय ही बड़े सुंदर एवं कलात्मक बन पड़े हैं। 'ग्राम कन्या' और 'ग्राम-वधू' नामक गीत, सरल स्वाभाविक और ग्राम जन्य अकृत्रिम शब्दों से प्राकृतिक छटा प्रस्तुत करने में समर्थ और सक्षम है। डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा ने इन गीतों के सौन्दर्य के संबंध में ठीक ही लिखा है, "मानव मन की प्रबलतम प्रवृत्ति प्रणय' इस संग्रह में सर्वत्र मृदुल हरित मखमली घास की तरह व्याप्त है, जिसमें सहज रागात्मक आवेग की चंचलता और बिछलन का सुखद स्पर्श है।"

मुक्ता नामक एक मुक्तक में वर्णित सौन्दर्य को देखिए। उपवन में ख़िले असंख्य कुसुमों की सुषमा इतनी अपरिमित है कि नयन भी उसे निहारने में अक्षम

हैं। सौन्दर्य की इस पारकाष्ठा का वर्णन कोई कैसे करे?

फैला है अपार उपवन,
फूलों का ओर न छोर।
नयनों की डलिया में कैसे
पाऊँ रूप बटोर?

प्रेम की पतवार को अब वह बंधन मुक्त करना चाहता है। मांझी को संबोधित कवि का यह गीत देखिए—

आज मांझी नाव को बाँधो नहीं
आज तुम पतवार को साधो नहीं
मोह वह बेकार है, सब छोड़ दो
आज लंगड़ इस तटी के तोड़ दो।

(*चित्रा* से)

5. *वासंती* (1943)—कविवर सोहनलाल द्विवेदी के 54 प्रेम गीतों का यह सुंदर संग्रह है। कवि आरंभ में ही वसंत को बधाई देते हुए कामना करता है—

कोमल वाहु लता फैलाओ
स्नेह आलिंगन कुंज बनाओ
जीवन के पतझर में सबको
मधु ऋतु पड़े दिखाई,
मधुकर! आज बसंत बधाई।

कवि वसंत की छटा को खेतों में खिले सरसों के फूलों में देखता है। प्रकृति अपने यौवन पर है। मधुमास में सरसों के पीले फूलों से स्वर्ण की सरिता बह रही है। सर्वत्र मनोहर कुमकुम बिछा हुआ है। मधु ऋतु के इस सुनहले रूपहले दृश्य को तो निहारिए—

तनिक सरसो तो निहारो।
खेत में खलिहान में क्या, राह में मैदान में क्या,
है बिछा कुमकुम मनोहर भर रही है दिशा चारों
जरा सरसों तो निहारो।

केसरी नारायण शुक्ल ने सोहनलाल द्विवेदी की प्रेम भावना को केवल संकीर्णता के दायरे तक सीमित न रखकर उसे उदार, उदात्त और गरिमायुक्त बताया है। वे कहते है 'कवि की भावना व्यक्तिगत प्रतीत होते हुए भी न तो संकीर्ण है और न अश्लील। उसमें उदारता और शालीनता दोनों है। वह उदार प्रेम के गीत गाना चाहता है, जिससे जीवन स्वतंत्र हो और विश्व के बंधन टूटें।

गाओ प्रणय के खुले मुग्ध शत छंद
हो मुक्त जीवन, शिथिल विश्व के बंद।
हो एक बिछुड़े, अविच्छिन्न संबंध
उन्मुक्त आनंद, उन्मुक्त हो तान!
गाओ मधुरिम तान!

बासंती के गीतों में जहाँ प्रकृति का सुंदर और मनोहारी चित्रण है, वहीं शब्दों में सारल्य और माधुर्य भी है। प्रेम प्रदर्शन में जहाँ स्नेह है, विश्वास है, वहीं धैर्य और स्थिरता भी है। देखिए कितनी मोहक और प्रांजल भाषा में हृदय को स्पर्श करते हुए शब्दों का सुमधुर प्रयोग है—

बिक चुका बेमेल प्रिय! मैं तो तुम्हारे बोल पर
अब मुझे तोलो न फिर, अपने निकष के तोल पर
फिर न जाऊँ मैं कहीं, दुःख हो तुम्हारे हर्ष को
अब भुलाओ मत मुझे मृदुबाहु के हिन्दोल पर।

बासंती के अनेक गीतों में बसंत से संबंधित सभी उपकरण और बिम्ब हैं। उसमें पुष्प, मधुकर, कोकिल मकरंद, मलयानिल और मादक सुगंध के काव्य-कल्पना सुलभ बिम्ब मौजूद हैं। इनके कुछ गीतों में प्रसाद, पंत, महादेवी के छायावादी गीतों की प्रतिच्छाया भी झलकती है। कवि सोहनलाल द्विवेदी में प्रकृति के वे दृश्य विद्यमान हैं, जो उसे गाँव, खेत, खलियान और तरुओं के पक्षियों में मूल रूप से दृश्यमान होते हैं। बसंत में कवि ने कोयलों की कुहुक को सुना है। नदी के कूल पर पक्षियों के कलरव को सुना है, फिर उन्हें अभिव्यक्ति के लिए शब्दों को ढूँढ़ने की मश्क्कत नहीं करनी पड़ी—

आज कोयल बोलती है।
रक्त के कण-कण उछलते, किस नदी के कूल चलते?
विरस प्राणों में सरस रस, कौन बरबस घोलती है?
आज कोयल बोलती है।

बासंती यौवन-सुलभ-प्रकृति-सौन्दर्य, प्रणय और कल्पना के ताने-बाने से बुना गीत संग्रह है, जिसमें कवि की सुकुमार रचनाओं की सरस सुमधुर अभिव्यक्ति हुई है।

तुम किस ललना की ललित लली
तुम किस तड़ाग की कुमुद कली?
प्राणों में मधु बरसाती हो
लहरा लावण्य लता लवली।

अतीत की स्मृतियाँ रह-रहकर विगत के आनंद लोक में विचरने को आतुर हैं—

वे दिवस गए हैं आज बीत, झंकृत फिर भी अब भी अतीत
जैसे न हुआ कुछ भी व्यतीत, सुधि के मन में है बहार।

प्रेयसी की स्मृतियों में खोकर, वह पुनः प्रिय के शुभ दर्शन की प्रतीक्षा में कह उठता है—

पलकों पर अलकें लहराते, चितवन से नवरस बरसाते
यदि मिले तुम्हें अवकाश कहीं इस पथ से कभी निकल आना।

यह कृति कवि की उस रूमानी प्रवृति की द्योतक है, जब नवयौवन की वयः संधि में हृदय के उद्‌गार क़लम पकड़कर उनसे *बासंती* के गीत लिखवा रहे थे।

6. ***पूजागीत*** (1944)—यह 56 गीतों का एक सुंदर संकलन है। इसमें 'वीणा पाणि! मुझे वर दो' शीर्षक कविता से जहाँ सरस्वती वंदना की गई है, वहीं राष्ट्र के प्रति कृषकों, श्रमिकों और सैनिकों का आह्वान भी किया गया है, ताकि वे स्वतंत्रता संग्राम के लिए कमर बाँधकर उठ खड़े हो—

आज है रण का निमंत्रण!
कृषक अपने खेत छोड़ो, चरण गति को आज मोड़ो

× × ×

श्रमिको श्रम सब आज त्यागो, किरण फूटी जाग भागो
राष्ट्र का खंडहर सँवरता, ले चलो तन रक्त के कण।

इस संग्रह में उद्‌बोधन एवं संबोधन गीतों का ही प्राबाल्य है। 'पूजागीत' भक्ति, वंदना या उपासना की मनःस्थिति का काव्य है, जिसका आराध्य अथवा उपास्य एकमात्र राष्ट्र देवता है। कवि सांप्रदायिक भेदभाव के विरुद्ध आवाज़ उठाता है, उसे वह राष्ट्र के हित में नहीं समझता।

मंदिर क्या हैं नहीं तुम्हारे ? मस्जिद जिनकी क्या वे न्यारे?
मठ विहार किसके हैं सारे?
सभी तुम्हारी गौरव गरिमा, निज को पहचानो!

हरिभाऊ उपाध्याय इसकी भूमिका में लिखते हैं, "महादेवी, नवीन, प्रेमी की पीड़ा और व्यथा व्यक्ति में से जन्म पाकर सामाजिक बनती है, अतएव उसमें एक व्यक्तिगत व रागात्मक अपील रहती है। सोहनलाल जी की व्यथा का उदगम राष्ट्र से होता है। उसकी अभिव्यक्ति भावात्मक तथा विधायक होती है।" वे सोहनलाल जी को 'युवा कवि' मानते हैं। वे कहते हैं जो कवि अपने आपके प्रति सच रहता है; वह सबके प्रति सच्चा रहता है। डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा का यह कथन बड़ा

ही युक्ति संगत है कि 'पूजा गीत' काव्य संग्रह आधुनिक राष्ट्रीयता के विकास के अगले चरण का आलोक चिह्न है, जिसमें व्यष्टि और समष्टि के स्वर पर राष्ट्र-जागरण के इतिहास का अभिनव अध्याय लिखा गया है। 'पूजागीत' के गीतों में राष्ट्रीय स्वरों का समुच्चय है। इन गीतों में भावात्मकता और कलात्मकता दोनों है। स्व. डॉ. बड़थ्वाल के ये शब्द इस काव्य संग्रह के संबंध में अत्यंत उपयुक्त प्रतीत होते है कि, "राष्ट्रीय चेतना को काव्य का सच्चा स्वरूप आपने दिया है।"

पूजागीत भक्ति, वंदना या उपासना की मनःस्थिति का काव्य है, जिसका आराध्य देवता राष्ट्र ही है। वह उसे ज्योतिमय कहता है, फिर किस ज्योति से उसकी आरती सजाए–

देवता तुम राष्ट्र के, क्या भेंट चरणों में चढ़ाऊँ?
हम अभी काल सो रहे थे, आत्म गौरव खो रहे थे
बन किरण तुमने जगाया, प्राण का कल्मष भगाया
ज्योतिमय! किस ज्योति से मैं आरती अपनी सजाऊँ?

इस संग्रह में राष्ट्रीयता की भावना आशा, ओज, साहस, धैर्य, दृढ़ता, उत्साह और बलिदान के बीच प्रस्फुटित हुई है। इसमें भाव और कला पक्ष दोनों ही समान रूप से विकसित हुए हैं। प्रचार से अधिक प्रकर्ष हैं। *भैरवी* में कवि देश को जगाने का प्रयास करता है, किन्तु *पूजा-गीत* में वह देश को आराध्य देवता मानकर उसकी स्तुति वंदना के गीत प्रस्तुत करता है। इस पूँजी में उसकी वृद्धि अंतर्मुखी हो गई है। उसकी राष्ट्रीय अब उसके व्यक्ति में घुल-मिल गई है। गीतों में संवेदना के स्वर में, सच्चाई और अन्तस् की झलक भी है। आशा और निराशा के तल में देश-प्रेम की अविरल धारा प्रवाहित है। कवि बंदिनी माँ को कैसे भूल सकता था, उसकी विषाद मूर्ति की झलक शब्द-चित्रों के माध्यम से निरंतर उभरकर सामने आती है–

है फटा अंचल लहरता
बन दरिद्र ध्वजा फहरता।
रत्न आभरणे! बनी तुम
आज पंथ भिखारिणी।

कवि भारतमाता को 'दया की पात्री' के रूप में नहीं देखना चाहता, वह उसे जगद्धात्री मानता है–

जाग माँ ओ जगद्धात्री
तू दया की बन न पात्री!
ले त्रिशूल सतेज कर में,
ओ त्रिशूल विनाशिनी!

कवि माता के अंचल से गुलामी का धब्बा मिटाने के लिए यौवन का बलिवेदी पर आह्वान कर रहे हैं—

मातृ भू के शुभ्र अंचल
का मिटा दे दाग।
ओ जवानी जाग!
× × ×
आज चल उस ओर है—
जिस ओर बलि चढ़ती जवानी
रहे युग के भाल पर
तेरी अरुण जलती निशानी

इस प्रकार पूजा गीत में भारत माता के स्तवन के साथ युवकों से राष्ट्ररक्षा के लिए त्याग और बलिदान का आह्वान भी किया गया है।

7. *युगाधार* (1944)—द्विवेदी जी की राष्ट्रीय चेतना इस रचना में प्रखर रूप से सामने आती है। अपने तैंतीस गीतों के इस संग्रह में वह राष्ट्रनायक गाँधी जी का आह्वान करता है।

बापू बोलो कहाँ लगा दें, इन प्राणों की बाज़ी
हमारी मिट जाएगी पीर
चलो, हा चलो गोमती तीर!
× × ×
करें हम अपने को बलिदान
कहे जग जय जय हिन्दुस्तान

इस कृति में आरंभ की आठ कविताएँ बापू के प्रति हैं, जिनमें त्याग, बलिदान, अहिंसा, दलितोद्धार और ग्रामोत्थान आदि के लिए गाँधी जी के प्रति सुमनांजली अर्पित की गई है—

तुम नव जीवन के नव विधान
युग-युग बंधन मुक्तिगान

जब गाँधी जी घुटने तक की धोती पहने जहाज में सवर हो गोल-मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए इंग्लैंड जा रहे थे तो कवि ने मुट्ठी भर के इस नंगे फ़क़ीर के संबंध में जो विस्मयकारी उद्‌गार व्यक्त किए थे, उन्हें देखिए—

नीली सागर के लहरों को
यह कौन अकेले चीर चला?
लड़ने को सुभद लड़ैतों से
यह कौन अकेले वीर चला?

कवि *युगाधार* की रचनाओं के संबंध में स्वयं लिखता है कि *भैरवी* में मैंने राष्ट्र के इसी जीवन, जागरण एवं बलिदान के जीवित चित्रों को काव्य का रूप देने का प्रयास किया है। समाज को मैंने आग्रहपूर्वक राष्ट्र का क्रांतिगान सुनाया है। *युगाधार* में युग की राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सामाजिक जन-क्रांतियों की चिनगारियाँ–कैसे कहूँ? भ्रम रेखाएँ है। मैं जानता हूँ कि जितना महान विषय मेरे सामने है, उसकी तुलना में मेरी योग्यता नगण्य है। किन्तु फिर भी, मैं इस आशा में जो कुछ बनता है, लिखे जा रहा हूँ कि कभी इस राख की चिनगारियों से वह आग्नेय काव्य प्रकट होगा, जिससे युग का ज्वलंत इतिहास स्वर्णाक्षरों में प्रदीप्त हो उठेगा।"

पं. सोहनलाल द्विवेदी ने गाँधी जी को युग का आधार मानकर उनके यश का गुणगान इस कृति में किया है। गाँधी और उनसे संबंधित व्यक्ति इस काव्य संग्रह के गीतों के प्रतिपाद्य हैं। 'बेतवा का सत्याग्रह' एक लंबा गीत है। 'भारत वर्ष' एक उच्च कोटि की रचना है, जिसमें भारत की महिमा का सुंदर गणगान है। यहाँ कवि दिनकर से प्रेरित दीख पड़ता है–

वह महिमामय अपना भारत
वह गरिमामय सुंदर स्वदेश
युग-युग में जिसका उन्नत सिर
है किए खड़ा हिमगिरि नगेश।

सोहनलाल द्विवेदी जी देश की दासता को सबसे बड़ा अभिशाप मानते हैं और अपेक्षा करते है कि देश के कवि, साहित्य सृष्टा और रचनाकार अपनी लेखनी को माँ की बेड़ियों की इस क्रंदनमय ध्वनि को क्यों नहीं सुनते? वे कहते हैं–

"आज के कवि का सबसे बड़ा सुवर्ण अवसर यह है कि वह अपने युग की इस सर्वतोमहान जन-क्रांति को काव्य का रूप प्रदान कर सके, जिससे आगे आनेवाली पीढ़ियाँ जब इस युग के राष्ट्रीय अभ्युत्थान को देखना चाहे, तब उनकी आँखें अंधकार में ही टकराकर न रह जाएँ।"

वे आगे चलकर चुनौती भरे इन शब्दों में उनका आह्वान करते हैं। 'जननी जन्मभूमि की शृंखला की कड़ियों से उनके प्राणों में दुर्वह व्यथा का महाज्चार क्यों नहीं उद्वेलित होता है? और निर्ममता से मानवता का कंठ घोटनेवाले साम्राज्यवाद के प्रति उनका सक्रिय क्रोध क्यों नहीं धधक उठता है?

जब बंदी है राष्ट्र, बंदिनी
अपनी भारतमाता
क्षुधित तृषित अ-वसन जन गण है
बैठा दूर विधाता।

वह युवकों का भी आह्वान करता है कि वे भी स्वतंत्रता की इस बलिवेदी पर अपने प्राण न्योछावर करने के लिए उद्यत रहें। इस कृति का पहला गीत ही तरुणों के प्रति है–

जिन्हें देश के बंधन लखकर, कुछ न सुहाता हो सुख सावन
स्वतंत्रता की रटन अधर में, आज़ादी जिनका आराधन।
'जो शिर-सुमन चढ़ा सकते हो हर्षित हो माँ के चरणों पर,
हमको ऐसे युवक चाहिए सके देश का जो संकट हर।'

कवि ने अपने 'प्रयाण-गीत' में नौजवानों में शौर्य, साहस और वीरता को अनिवार्य बताते हुए कहा है कि ऐसा यौवन किस काम का है, जिसके मुख पर रक्तिम लालिमा की आभा न चमकती हो। वह जीवन क्या है, जिसमें यौवन की लहर न हो? राष्ट्र-संघर्ष के लिए बलिष्ठ और उत्साही नौजवानों की आवश्यकता है–

युग-युग सोते रहे आज तक जागो तो मेरे वीरो

× × ×

वह यौवन क्या, जिसके मुख पर, खिलता शोणित रंग नहीं?
वह यौवन क्या, जिसमें बढ़ने की हो अमर उमंग नहीं?
शैशव ही सुखमय है ऐसा यौवन आने के पहले
मर मरकर जीने की जिसमें उठती तरल तरंग नहीं।

8. *प्रभाती* (1944)–राष्ट्रीय चिन्तन से संबद्ध विभिन्न गीतों का संकलन है। इसमें 42 गीत हैं। इनका केन्द्र बिन्दु यद्यपि 'राष्ट्रपिता गाँधी' हैं, किन्तु अन्य राष्ट्रपुरुषों, यथा तुलसीदास, सुमित्रानन्दन पंत, हरिऔध, प्रेमचन्द और आचार्य शुक्ल को भी काव्यांजलि प्रस्तुत की गई है। कवि सामान्य जनता को ही अपने काव्य का माध्यम बनाना श्रेयस्कर समझता है। उनकी ही भाषा में उन्हें संबोधित करता है। कवि का कहना है–

" 'कस्मै देवाय हविषा विधेमयः' का उत्तर और हो ही क्या सकता है? इसका एक मात्र उत्तर यही है कि शताब्दियों से उपेक्षित, तिरस्कृत एवं बहिष्कृत जनता के लिए हम लिखें और उसकी भाषा में लिखें, जिसे वह समझ सके। आज हमारे राष्ट्र की माँग यही है कि हम जनता के लिए साहित्य रचना करें।"

प्रस्तुत संकलन द्विवेदी जी के किसी नवदिग्बोधक साहित्यिक आयाम के द्वार को उद्घाटित करता प्रतीत नहीं होता, अपितु वह तो पूर्व वर्णित राष्ट्रीय काव्य प्रवृत्तियों का ही अग्रसारित चरण है। कवि ने इसे 'बहुजन हिताय' कहा है। 'गाँधी' के प्रति उनकी अटूट आस्था पग-पग पर दृष्टिगोचर होती है। उनके प्रति लिखना वह अपने काव्य धर्म का अंग मानता है। देखिए–

किसने स्वदेश को युग-युग की
गहरी निद्रा से जगा दिया?
किसने भारत को पल पल की
अलसित तंद्रा से जगा दिया?
चला कौन मरने-मिटने
लेकर कुछ वीरों की टोली?
सुलगा दी मग-मग, पग-पग में
किसने आज़ादी की होली?

गाँधी जी का आश्रम 'सेवाग्राम' राष्ट्र का तीर्थ बन गया है। इसके संबंध में कवि के ये शब्द देखिए—

फूल की कुटीर बनी
रहते हैं कौन यहाँ?
अर्धनग्न।

त्यागी से, विरागी से अनुरागी से—

× × ×

होता जहाँ प्रभात
ये ऋषि-मुनियों की जमात
जाती चले खेतों में
लग जाते जोतने बोने में
जगता अभिमान, उन्हें कृषक के होने में।

पं. सोहनलाल द्विवेदी आज़ादी के उन परवानों के अदम्य साहस के प्रति नतमस्तक हैं,

जो फ़ाँसी के तख़्तों पर जाते हैं झूम, जो हँसते-हँसते शूली को लेते चूम,
दीवारों में चुन जाते हैं जो मासूम टेक न तजते, पी जाते हैं विष का घूँट।

1946 में, *देश दूत* में *प्रभाती* की समीक्षा करते हुए लिखा था, "हिन्दी संसार के आधुनिक राष्ट्रकवि, पं. सोहनलाल द्विवेदी की *प्रभाती* में युग के प्रभात का मधुर स्वागत गान है। छवि के बंधनों में न उलझकर वह संसार का आँखें खोलकर देखना चाहता है। काव्य के उपादान दिन-प्रतिदिन बदल रहे हैं। अंग्रेज़ी साहित्य में रोमांटिक युवा के बाद जिस प्रकार साहित्यिक प्रतिक्रिया हुई, हिन्दी साहित्य में भी जनहित साहित्य की प्रवृत्ति इधर कुछ दिनों से दृष्टिगोचर हो रही है।...इस संग्रह में राष्ट्र के प्राण गाँधी जी एवं उनसे संबंधित अन्य विषयों पर सुघर रचनाएँ हैं, और हैं नित्यप्रति के विषयों पर प्यारे-प्यारे गीत।

9. *विषपान* (1945)–एक लघुआकार का खंड काव्य है, जो सागर मंथन की पौराणिक कथा पर आधारित है। कवि का संदेश इस आख्यान के माध्यम से यही है कि हम मृत्यु से लड़कर 'अमृत' का वरण करें। यही उपनिषद की प्रार्थना भी है–

मृत्योर्माऽमृतं गमय। तथास्तु।

इस खंड काव्य के दस सर्ग हैं–1. परिचय, 2. पराजय, 3. आकाशवाणी, 4. प्रस्ताव, 5. अमृत, 6. अभिमान, 7. अभियान गीत, 8. समुद्र मंथन, 9. विष, 10. विषपान।

इस कथानक के माध्यम से कवि ने मृत्युंजयी होने की कामना की है। समाज में संकटमोचन करनेवाली और विषपान करनेवाली कोई महान आत्मा अवश्य होती है। अमृतपान के लिए तो सभी आतुर हैं।

अमृत-अमृत की रटन लगी थी देवों की मधु रसना में,
अमृत-अमृत की थी प्रतिध्वनि, दैत्यों के अंतर पलना में

किन्तु जब सागर मंथन के उपरांत कालकूट निकला तो सब व्याकुल हुए, गरल का पान कौन करे?

अमृत हो गया स्वप्न अरे! यह तो है कालकूट निकला
गरल, महाविष, नील श्याम, भूतल से आज फूट निकला।

गरल पान के लिए कोई तत्पर नहीं हुआ तो शिव ने जनकल्याण की भावना से सहज उसका पान किया। यहाँ जननायक के रूप में गाँधी को संकटमोचक के रूप में परोक्ष रूप में प्रस्तुत किया गया है। शिव लोकत्राण के लिए आगे बढ़ते हैं और जनकल्याण की भावना से उन्होंने विषपान को श्रेयस्कर समझा–

महादेव देवाधि देव ने पल में विष का पान किया
जलते दैत्य देवता जलते, जलते भव का त्राण किया
यदि न आज करुणा करने विष का पान किया होता,
बचता कौन? काल ने सबका ही प्राणांत किया होता।

इस खंड काव्य में पराधीनता के अभिशाप से मुक्ति हेतु चलाए जा रहे आंदोलनों की याद ताज़ा हो आती है। अतः यह एक पौराणिक आख्यान होते हुए भी अपने युग के लिए प्रासंगिक है। कवि इस आख्यान के माध्यम से राष्ट्र-कल्याण का संदेश देना चाहता है।

उठो चलो मथकर समुद्र को, तुम अमृत का पान करो
अमर बनो, फिर करो युद्ध यह, हीन भाव अवसान करो।

अंत में एक गीत के माध्यम से युग पुरुष बापू के प्रति उनके संघर्ष और बलिदान के लिए आभार व्यक्त करता हुआ कवि कहता है—

यदि तुम करते नहीं विषपान!
तो कौन उठाता महाभार? सब देव दनुज थे गए हार;
यह जग जल बनता यहा क्षार।
वे शब्द न छंद ढले अब तक, जो गा सकते हों कीर्ति गान!
पर दुःखकातर है महाप्राण!

10. *सेवाग्राम* (1946)—यह विश्ववंद्य बापू को उनके 78वें जन्मदिवस के अवसर पर समर्पित, सोहनलाल द्विवेदी की पूर्व प्रकाशित कृतियों *भैरवी, युगाधार, प्रभाती* तथा *पूजागीत* से संगृहीत 97 रचनाओं का संकलन है। इनमें 'राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र' नाम से एक नई कविता सम्मिलित की गई है। इसकी कुल 12 पंक्तियाँ हैं। अंतिम पंक्तियाँ देखिए—

चमको राष्ट्र गगन मंडल में
चूमे चरण सिन्धु तेरे
मेरे वीर सुभाष चंद्र।
सौभाग्य-चंद्र बन जा मेरे।

सोहनलाल द्विवेदी जी ने राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत जो काव्य रचनाएँ की हैं, उनमें राष्ट्र बोलता है, वही इष्ट है और राष्ट्रीयता के आराधक स्वयं सोहनलाल जी हैं। किन्तु कवि की भावना अंतर्मुखी होकर जब अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करती हैं तो वे भाव प्रधान कृतियाँ सामान्य जन की भावनाओं से तादात्म्य स्थापित करती है।

सेवाग्राम का यह संकलन सामने आते ही ऐसा लगता है, जैसे राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास काव्य रूप में साकार हो गया हो। इस संकलन की एक विशेषता यह है कि इसमें 'काल मार्क्स के प्रति' एवं 'लाल ध्वजा' जैसी विदेशी पृष्ठभूमि की रचनाओं को सम्मिलित नहीं किया गया है। यहाँ सोहनलाल द्विवेदी जी की राष्ट्रीयता विशुद्ध भारतीय परिवेश और संस्कृति से प्रेरित दिखाई पड़ती है। अपने समकालीन विश्व परिदृश्य से वह बेख़बर नहीं है, किन्तु वह भारतीय राष्ट्रीयता के लिए भारत के इतिहास, संस्कृति और प्राचीन वाङ्मय को ही श्रेय देते हैं। उनका ध्येय प्रथम 'राष्ट्रीयता' फिर 'अंतर्राष्ट्रीयता' है। यही कारण है कि वह अपने समकालीन काव्य आदर्शों और वादों से बिलकुल प्रभावित नहीं है। प्रगतिशील लेखकों में राष्ट्रीय चिन्तन तो है, किन्तु वे मार्क्सवादी विचारधारा से भी प्रेरणा लेते हैं। डॉ. अमरनाथ झा ने सेवाग्राम की कविताओं के संबंध में कवि सोहनलाल द्विवेदी के राष्ट्रीय विचारों की प्रशंसा करते हुए लिखा है, "पहले अपना देश, फिर अन्य

देश। यह आज का गान है, इसकी आवश्यकता भी है। पाश्चात्य सभ्यता के वाह्य आडंबर से हमारे मन में यह भाव उत्पन्न हो गया है कि जो कुछ आज आविष्कार हो रहा है, जो कुछ हमें अन्य देश में दीख पड़ता है, जो कुछ हम विदेशी साहित्य, विदेशी राजनीति, विदेशी दर्शन में पाते हैं वही अनुकरणीय है।" सोहनलाल द्विवेदी इसीलिए न प्रगतिवाद से जुड़े और न किसी छायावाद या रहस्यवाद से। उनका का तो एक ही वाद था और वह था—राष्ट्रवाद और केवल 'राष्ट्रवाद'। सेवाग्राम की कविताएँ इसी आदर्श को सामने रखकर लिखी गई हैं।

2. स्वातंत्र्योतर रचनाएँ

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद कवि सोहनलाल द्विवेदी के काव्य चिन्तन में विशेष अंतर नहीं आया। 1947 के बाद की इनकी रचनाओं में निहित सांस्कृतिक जागरण की झंकार तथा राष्ट्रीयता के तुमुलनाद की टंकार एक-सी है। *भैरवी* (1941) से लेकर *संजीवनी* (1983) तक इनकी निरंतर विकासशील राष्ट्रीय चेतना ने विभिन्न सोपान-स्तरों का स्पर्श किया है। इनके काव्य का केन्द्र बिन्दु 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रीथ चेतना' के विविध आयाम रहे। इनकी लेखनी एक ऐसे ऐतिहासिक युग में गतिमान रही है, जिसने एक शताब्दी से भी कम समय में प्रत्येक क्षेत्र में युगांतरकारी गतिशीलता और परिवर्तनों का साक्षात्कार किया है। हिन्दी साहित्य में तेज़ी से उभर रहे विभिन्न वादों, वर्गों और चिन्तनधाराओं से असंपृक्त कवि सोहनलाल द्विवेदी ने अपने काव्य लक्ष्यों का पूर्णतः पालन किया है। उन्होंने भारत के प्राचीन गौरव गान के अपने आदर्श को स्वतंत्रता के बाद भी यथावत रखा। किन्तु भारतीय समाज से जो अपेक्षाएँ कवि को थीं, उनके पूरा न होने पर अपने नैराश्य को भी वाणी देने से वे नहीं चूके।

कलम छोड़कर ले न सहारा क्रोध कहीं तलवार का
मुझे भरोसा रहा नहीं, अब दिल्ली के दरबार का।

सोहनलाल द्विवेदी ने स्वतंत्रता के पश्चात् भी अपने आख्यान गीतों की शृंखला को निरंतर काव्य का माध्यम बनाया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के सात वर्ष पश्चात् भी कवि ने देश के कर्णधारों को जनकल्याण के पथ से विरत होकर वैभव भोग की होड़ में लिप्त देखा तो बुद्ध जैसे त्यागी तपस्वी के जीवन से प्रेरणा लेने के उद्देश्य से ऐतिहासिक और पौराणिक आख्यान लिखने की अपनी परंपरा को जारी रखा। इसी क्रम में उनका काव्य आख्यान *सुजाता* आया।

11. *सुजाता* (1954)—*वासवदत्ता* की पृष्ठभूमि में ही *सुजाता* का कथानक तैयार हुआ है। यह एक ऐसी आख्यान गीति है, जिसके सूत्र बौद्ध जातक से लेकर, द्विवेदी जी ने कल्पना के ताने-बाने बुनकर अभिनव कथा-काव्य की सृष्टि की है। इसके 'बुद्ध' गौतम बुद्ध से भिन्न प्रतीत होते हैं। यहाँ सुजाता की सर्वमान्य कथा

को नया मोड़ दिया गया है। वह बोधिसत्त्व को 'खीर' न खिलाकर 'अन्नग्रास' प्रस्तुत करती है—

हुआ सुजाता नाम सार्थक, जब निज कर से देकर अन्न
पारायण के प्रथम ग्रास से, बोधिसत्व को किया प्रसन्न।

यहाँ कवि ने मूल कथा में जो बदलाव किया है, वह सामान्य ग्रामीण जनता की पृष्ठभूमि के ही अनुकूल है। 'विषपान' के कथानक की भाँति यहाँ भी कवि ने युगानुरूप नई कल्पना को साकार रूप प्रदान किया है—

उस तस्मै की जूठन की क्या दो कणिकाएँ भी दान।
दे सकती हो जब न सुजाते! जिससे बने बुद्ध भगवान।

इस काव्य संकलन का मेरुदंड भले ही 'सुजाता' हो, किन्तु इसमें 26 छोटी बड़ी अन्य कविताएँ भी सम्मिलित हैं, जो कवि के राष्ट्रीय हृदय को खोलकर रख देती हैं।

12. *चेतना* (1954)—यह स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद लिखे गए तीस गीतों का संकलन है। इनमें स्वतंत्रता के स्वागतगान के साथ-साथ स्वतंत्रता के महानायक राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन भी है। गाँधी जी कवि के प्रेरणा स्रोत ही नहीं राष्ट्र-देवता भी हैं। वे स्वयं एक गीत में गाँधी जी के प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहते हैं—

किस भाषा में करूँ आज मैं देव! तुम्हारा वंदन?
शब्द नहीं कर पाते हैं समुचित सम्मान तुम्हारा
भाषा मूक हो जाती है गाते गुण-गाण तुम्हारा।
छंद मंद पड़ जाते हैं रुक जाती है स्वर धारा।

कविवर सोहनलाल द्विवेदी ने 'अर्धनग्न' शीर्षक से गाँधी जी के एक संस्मरण को काव्य रूप में प्रस्तुत किया है। इसकी भूमिका में कवि ने जो लिखा है, उसे यहाँ प्रस्तुत करना अप्रासांगिक न होगा। गाँधी जी ने अर्द्धनग्न रहने का व्रत क्यों लिया, उसका कारण बताते हुए कवि कहते हैं—

"एक बार गाँधी जी मद्रास की ओर एक गाँव में गए। वहाँ उन्होंने एक स्त्री को मेले कुचैले कपड़े पहने देखा। गाँधी जी वहीं रुक गए और उन्होंने उस स्त्री से इतने गंदे रहने का कारण पूछा। स्त्री ने कहा उसके पास एक ही धोती है और गाँव में कहीं पानी नहीं है। इसलिए कपड़े साफ़ करने का अवसर नहीं मिलता। आप बड़े आदमी हैं। हम ग़रीबों का दुःख नहीं जान सकते। हमारे जैसे करोड़ों बहने भाई इसी प्रकार रहते हैं। गाँधी जी को उस स्त्री की बात घर कर गई और उन्होंने व्रत लिया कि जब तक देश के सभी भाई-बहन पूरे कपड़े नहीं पहनेंगे, तब तक

वे भी शरीर पर आधे कपड़े पहनेंगे। एक लंगोटी भर लगाएँगे। गाँधी जी ने उस स्त्री को समझाया कि यदि वह चरखा कातना आरंभ कर दे तो देश की सभी ग़रीबी दूर हो जाएगी। गाँधी जी ने अपने व्रत को जीवनपर्यन्त निभाया।"

द्विवेदी जी ने इस पूरी घटना को 'अर्धनग्न' नाम की इस कविता में व्यक्त किया है–

सेवाग्राम का यह यती
तव से अर्ध नग्न व्रती,

चेतना में राष्ट्र की चेतना जाग्रत हुई है। वे स्वयं लिखते हैं, "चिरकाल से जिन सहृदय पाठकों को मेरे नवीन प्रकाशन का अभाव अनुभव होता रहा है, मुझे विश्वास है कि वे *चेतना* को पाकर प्रसन्न होंगे।"–*चेतना* (विज्ञप्ति)

सोहनलाल द्विवेदी गाँधी जी को उसी प्रकार अपने काव्य का स्रोत मानते थे, जिस प्रकार मैथिलीशरण गुप्त ने 'राम' के संबंध में कहा था–

राम तुम्हारा चरित स्वयं काव्य है
कोई कवि बन जाए, सहज संभाव्य है।

चेतना की विज्ञप्ति में द्विवेदी जी स्वीकार करते है, "आलोचकों का मत है कि मैंने अपनी रचनाओं से गाँधी जी को बहुत ऊपर उठा दिया है, किन्तु बात तो इसके प्रतिकूल है। सच तो यह है कि बापू ने मेरी रचनाओं को ऊपर उठा दिया है। मेरी काव्य साधना गाँधी जी को आराध्य देवता मानकर धन्य हो गई है।" अपने आराध्य देव बापू की हत्या पर कवि कितना खिन्न है। उसके कवि मानस को इस दुःखद घटना ने झकझोर कर रख दिया है।

आज देश पर अनभ्र वज्रपात है हुआ
आज देश का अमूल्य प्राण मृत्यु ने छुआ।
बन अमृत जिला रही थी जिस फ़क़ीर की दुआ
आज वही महाप्राण देश में रहा नहीं।
लाल रक्त से रंगा निकल रहा विहान है
आसमान रो रहा तड़प रहा जहान है
है समस्त देश बन गया महा मसान है।
आह! आज राष्ट्रपिता, राष्ट्र से छला गया।

इस संग्रह में लौह पुरुष सरदार पटेल, राजर्षि टंडन, पंद्रह अगस्त, राष्ट्रध्वज और दीपावली पर भी श्रद्धासिक्त कविताएँ हैं। इनमें राष्ट्रीय भावना ही इनकी लेखनी से इनके उद्‍गारों को शब्द प्रदान कराती है। चेतना में 1947 से 1954 तक की तीस कविताएँ संकलित हैं।

13. *गांध्ययन* (1969 ई.)–गाँधी जी के महान व्यक्तित्व, उनके जीवन तथा उनकी विचार धारा पर लिखी गई सोहनलाल द्विवेदी जी की 39 कविताओं का एक सुंदर संकलन है। यह रचना महात्मा गाँधी की जन्म शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित हुई थी। आचार्य काका कालेलकर के अनुरोध पर श्री सोहनलाल जी ने यह संकलन तैयार किया था। द्विवेदी जी लिखते हैं कि काका कालेलकर साहब ने आग्रह किया था कि मेरी "गाँधी विचारधारा की कविताओं का एक ऐसा संग्रह तैयार किया जाए, जिससे गाँधी युग का दर्शन प्राप्त हो जाए और वह आज के युवक युवतियों के हाथों में दिया जाए।"

इस संवंध में उनका यह कथन द्रष्टव्य है–'प्रस्तुत काव्य संकलन' के पीछे गाँधी विचारधारा के समर्थ प्रवक्ता एवं प्रकाशक, इन्हीं प्रमुख व्यक्तियों की प्रेरणा है। वस्तुतः इस प्रकाशन के प्रस्तुत कर्त्ता वे ही हैं, मैं नहीं।

गाँधी शताब्दी समिति के मंत्री, श्री अक्षय कुमार करण ने भी द्विवेदी जी के इस संकलन के बारे में लिखा है कि द्विवेदी जी ने बापू की वाणी को ऐसे छंदों में बद्ध किया है कि छोटा बच्चा भी जिसे पढ़ता है, गुनगुनाता है, फिर उसे गाने लगता है। मज़दूर भी जिसे पढ़ता है, और उसे ही अपनी बात उसमें दिखाई देती है। किसान भी जब सुनता है और फिर गुनगुनाता है। फिर उसे उसमें अपनापन ही दिखाई पड़ने लगता है। ऐसी उनकी रचना सदा की अमर रचना है।'

गान्ध्ययन में अधिकांशतः कवि की राष्ट्रीय काव्यधारा की प्रतिनिधि रचनाओं–*भैरवी*, *पूजागीत*, *युगाधार* और *चेतना* से संगृहीत गीत समाविष्ट है। ये गीत इतने लोकप्रिय है कि पाठकों को यह समझने में देर नहीं लगती कि ये गीत सोहनलाल द्विवेदी जी द्वारा अनेक कवि सम्मेलनों में गाए गए हैं। आरंभ पूजागीत से होता है–

वंदना के इन स्वरों में एक स्वर मेरा मिला लो।

दूसरा गीत इनका सबसे लोकप्रिय गीत 'युगावतार गाँधी' है, जो गाँधी जी के करोड़ों अनुयायियों की भावनाओं का प्रतीक है।

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि,
गड़ गए कोटि दृग उसी ओर।

द्विवेदी जी का एक लोकप्रिय प्रयाण गीत भी इसमें समाविष्ट है, जिसे स्वतंत्रता के सत्याग्रही बड़ी मस्ती से गाया करते थे।

बढ़े चलो! बढ़े चलो।
न हाथ एक शस्त्र हो,

न साथ एक अस्त्र हो,
न अन्न नीर वस्त्र हो,
हटो नहीं
डटो वहीं
बढ़े चलो
बढ़े चलो।

इस प्रकार यह रचना पूर्णतः गाँधी और उनकी विचारधारा से ओत-प्रोत उद्गारों का ही संकलन है।

14. *मुक्तिगंधा* (1972)–यह स्वातंत्र्योत्तर काल में लिखी गई कवि की बहुचर्चित 37 कविताओं का संकलन है, जिन्हें पाँच विभिन्न उपशीर्षकों के अंतर्गत रखा गया है। कवि सोहनलाल द्विवेदी जी स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए नवयुवकों को प्रेरित और उत्साहित करते रहे। वह आज असह्य त्याग और बलिदानों से प्राप्त उस आज़ादी के सही उपयोग का मूल्यांकन करना चाहता है। कवि दृश्यमान कृत्यों से संवेदनशील होकर अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है। उत्तर दायित्व सँभालनेवालों को सचेत भी करता है, उन्हें गाँधी और अन्य राष्ट्रनायकों की याद भी दिलाता है। काका कालेलकर ने आशीर्वाद में लिखा है, ऐसे कवि जब राज्य रूपी जन-तंत्र की समालोचना करते हैं, तब वह भी सचमुच जनता के लिए नसीहत ही होती है, "*मुक्तिगंधा* का कवि इसी वर्ग का रचनाकार है।"

इस गीत-संग्रह के पुरोवाक् में वह लिखता है–"स्वातंत्र्योतर काल में देश जिन आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों के मोड़ से गुज़रा है, जनता पर जो उसकी प्रतिक्रिया हुई है, उसकी मानसिक आशा, निराशा, आकांक्षा, आक्रोश के भाव साकार होकर आपसे साक्षात्कार करना चाहते है।" इस संकलन में इन्हीं भावों की पद्यबद्ध परिणति है। इसमें कवि की व्यक्तिगत नहीं, जन भावनाओं की अभिव्यक्ति है, जिनका वह प्रतिनिधि है, जिनका वह प्रहरी है। स्वाधीनता के रजत जयंती वर्ष में जनमानस पर छाया अवसाद उसके विद्रोही और राष्ट्रभक्त मन को ललकारता है।

कवि कहता है, "सत्य से मुकरना कायरता है, विशेष रूप से साहित्यकार की ईमानदारी के लिए। वही सही समाज का व्यवस्थापक है। वह अपने दायित्व से कतराएगा तो समाज कतराएगा। ये रचनाएँ युवा पीढ़ी को समर्पित करते हुए सोहनलाल द्विवेदी जी आशा करते हैं कि युवा पीढ़ी देश के प्रति अपना दायित्व निभाने में नया मनोबल, नए संकल्प, नई प्रेरणा दे सके तो वह सृजन सार्थक होगा और युवा पीढ़ी सशक्त एवं समृद्ध भारत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने में आगे बढ़ेगी।"

इस रचना का प्रथम गीत इस दिशा में संकेत भी दे रहा है और सचेत भी कर रहा है–

अब न गहरी नींद में तुम सो सकोगे,
गीत गाकर मैं जगाने आ रहा हूँ
अतल अस्ताचल तुम्हें जाने न दूँगा
अरुण उदयाचल सजाने आ रहा हूँ।

कवि दुःखी मन से नेतृत्व को चुनौती भरे शब्दों में ललकारता है–

ऐ लाल किले पर झंडे फहराने वालो
सच कहना कितने साथी साथ तुम्हारे हैं?

× × ×

ये झूठी खुशियाँ और मनाओ आज नहीं,
दिन आज खुशी का नहीं दुखी दिलवालों का।
पीछे झंडा फहराना, ऐ झंडे वालो,
पहले जवाब दो मेरे चंद सवालों का।

कवि अपना आक्रोश भाषा के संबंध में भी व्यक्त करता है। जिस हिन्दी को संविधान में देश की राजभाषा के रूप में समादृत किया गया था, उसका कार्यान्वयन नहीं हो रहा है। कवि दुःखी मन से शासन व्यवस्था के प्रति अपना क्षोभ इन शब्दों में निकालता है–

एक सूत्र में बँधा राष्ट्र यह जिस भाषा जिस भाव से
हुआ देश स्वाधीन हमारा जिसकी शक्ति-प्रभाव से।
वही राजभाषा न बन सकी, जिसके द्रोह दबाव से
जिसे विदेशी भाषा से हो मार्ग मिला उद्धार का
मुझे भरोसा रहा नहीं, अब दिल्ली के दरबार का।

इसी संकलन में एक कविता 'यह कैसा जनतंत्र?' है, जिसमें कवि वर्तमान राजनीतिक स्थिति के कारण बढ़ती महंगाई, बेरोज़गारी और जनता की लाचारी से क्षुब्ध होकर अपने नैराश्य को इन शब्दों में व्यक्त करता है–

महँगाई बढ़ रही रात-दिन, द्रुपद-सुता के चीर सी
बेकारी बढ़ रही चीरती अंतर्मन को तीर सी,
जाएँ कहाँ, रहे क्या खाएँ, कसक रही है पीर सी।
क्या मुहताज बने रहना ही अपनी अमिट लकीर सी?
यदि उत्कर्ष यही है अपना, तो क्या होगा हास रे?
ओ भारत के भाग्य विधाता, बदलो यह इतिहास रे।

इसी के 'अभिवादन' खंड में कवि सोहनलाल द्विवेदी ने दस गीतों में भारत की महान विभूतियों के प्रति अपनी आस्था और नमन के भाव व्यक्त किए हैं। इन्होंने अशोक, शिवाजी, गाँधी, विनोबा भावे, लालबहादुर शास्त्री, महाप्राण निराला तथा सीमांत गाँधी के अभिवादन द्वारा उनके प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किए हैं। इस संकलन में कवि राष्ट्र के प्रति जहाँ अपनी आस्था और कृतज्ञता व्यक्त करता है, वहीं वह आज के कर्णधारों के प्रति, अपना शिकवा भी व्यक्त करता है। इस संग्रह में आज के कड़वे सत्य की कुछ धूमीली, कुछ तीती गंध है, जिसे कवि स्वयं आत्मसात करने के अतिरिक्त युवा पाठको से भी ऐसी ही अपेक्षा रखता है।

अशोक के प्रति कविता में वह अशोक के भिक्षुपात्र लिए करुणा के अवतार रूप की अपेक्षा कलिंगविजयी विक्रम पौरुष रूप को देखना चाहता है। शस्त्र-त्याग की प्रवृत्ति ने देश को निर्बल बना दिया, जिसका खमियाज़ा यह देश सदियों से भुगत रहा है—

शस्त्र न उठा पाया हाथों में
शस्त्रों का अभ्यास नहीं।
क्या तरुणाई में तुमने ही
दिया हमें संन्यास नहीं।
हे कलिंगविजयी! यह कैसा
दया धर्म पथ सुझा दिया?
आज तुम्हारे विक्रम-पौरुष
का, लगता है, बुझा दिया।

15. *जय भारत जय* (1972)—कवि का यह संकलन भारतीय स्वाधीनता की रजत जयंती के उपलक्ष्य में राष्ट्र को समर्पित है। वियोगी हरि जी अपने आमुख में इस संकलन के मंगल अवसर पर प्रकाशन को मणि-कांचन योग मानते हुए कहते हैं, "मेरी अभिलाषा है कि इन रचनाओं को पढ़कर इनको गाकर और इनको सुनकर गाँधी के भारत के प्रति वह भक्ति भावना पुनः जाग उठे, जिसे हम आज भूल-से गए हैं, बल्कि भुलाया जा रहा है।"

वे गाँधी जी के प्रति पं. सोहनलाल द्विवेदी की निष्ठा के संबंध में लिखते हैं, "ऐसा लगता है कि तुलसी की दृष्टि जैसे अपने राम पर स्थिर हो गई थी, वैसे ही सोहनलाल की दृष्टि गाँधी पर एकाग्र हो गई है। गाँधी को लक्ष्य में रखकर ही कवि ने राष्ट्र पूजन की सरस सामग्री अंतस् के थाल में सजाने का सफल प्रयास किया है।"

इस संकलन की पृष्टभूमि को स्पष्ट करते हुए श्री सोहनलाल द्विवेदी जी लिखते हैं—"इन रचनाओं को लिखते समय मेरे समक्ष भारत की कोटि-कोटि जनता

रही है—अपढ़ और पढ़ी, अशिक्षित तथा सुशिक्षित भी जिसने एकात्म भाव से भारत माता की वंदना की, अर्चना की और श्रृंखला की एक-एक कड़ी को छिन्न-भिन्न करने में अपने को, सुमनों के समान माँ के चरणों में समर्पित किया, उनके भावों को ही अपनी भाषा में छंदबद्ध करना मेरा अभीष्ट रहा है।"

इसी संदर्भ में वे आगे लिखते हैं—"जिन मुक्ति मंत्रों से राष्ट्र नायकों ने स्वतंत्रता साधकों को दीक्षित किया था, उन छंदों का पारायण पुनः मन प्राण को ऊर्ज्वसित, प्रदीप्त एवं स्पंदित ही नहीं करता, स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए नए संकल्पों की आवृत्ति से नई स्फूर्ति एवं शक्ति भी प्रदान करता है।"

कवि की इस महत्त्वपूर्ण कृति के संबंध में प. मदनमोहन मालवीय, रामचंद्र शुक्ल, बाबू श्यामसुंदर दास, मैथिलीशरण गुप्त, पं. जवाहरलाल नेहरू की नहीं, श्री अटलबिहारी वाजपेयी जी ने भी अपने उद्‌गार व्यक्त किए हैं। अटल जी लिखते हैं—"स्वतंत्रता के संघर्ष में द्विवेदी जी ने अपने गीतों से बलिपथ पर चढ़ने की प्रेरणा दी और जब कभी आज़ादी का कारवाँ थका या रुका, तो द्विवेदी जी ने अपनी क़लम की अग्नि शिखा का रूप देकर हृदय-हृदय दें उत्साह की चिनगारियाँ धधकाई और क़दम से क़दम मिलाकर चलने की प्रेरणा दी।"

इस संग्रह के आरंभ में 'कवि' स्वतंत्र भारत की जय जयकार करता हुआ भारत का स्तवन करता है—

जय जय भारत जय
जय स्वतंत्र भारत, जय जननी जय जय भारत जय।
जय नवीन आकाश भरा नव
चंचल अंचल हर्ष भरा भव
जय विमुक्त विहंगों के कलरव।

संकलन में राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत 74 चुनिन्दा गीतों को समाविष्ट किया गया है। अनेक गीत पूर्व संकलनों में भी सम्मिलित है—जैसे 'पूजागीत', 'चल पड़े जिधर दो डग-मग में' 'वह तेरी मेहनत पर किसान', 'राणा प्रताप के प्रति', से गाँव का संत, दांडी यात्रा, सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, प्रयाण गीत तथा राष्ट्र देवता आदि। इनके अतिरिक्त कवि ने 1971 में पाकिस्तान पर भारत की ऐतिहासिक विजय और बंगला देश के निर्माण को एक पावन पर्व की संज्ञा देते हुए 'विजयोत्सव' का एक ओजस्वी गीत लिखा था।

ऐसा विजयोत्सव जीवन में, बार-बार ही आए।
हिम किरीटिनी का मस्तक नव विजय श्री से चमके
कर बन्दना कोटि-कोटि सुत मुख पर आभा दमके
गंगा गले मिले पद्‌मा से, मिलन लहरियाँ ठमके

'जय बंगला' 'जय हिन्द' नाद से धरती नभ गहराए
ऐसा विजयोत्सव जीवन में बार-बार ही आए।

16. *तुलसी दल* (1980)—यह नैतिकता और उच्च आदर्शों से परिपूर्ण विविध गीतों का एक संकलन है, जो आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के प्रदूषित वातावरण से प्रभावित भारतीय समाज के लिए वस्तुतः एक 'काव्य-रसायण' के तुल्य है। देश में जो नव-निर्माण हो रहा है, उसमें नैतिक मूल्य पीछे छूटते जा रहे हैं और सामाजिक संतुलन बिगड़ रहा है। इसलिए प्रगति की इस दौड़ में मानसिक-आत्मिक और वैचारिक मूल्यों की भी नितांत आवश्यकता है। इस संकलन के गीत बाल-तरुण-प्रौढ़ सभी स्तर के पाठकों के लिए आंतरिक प्रेरणा का स्रोत हैं।

कवि नवराष्ट्र जागरण के युग में तुलसीदास द्वारा प्रवाहित अमृत वाणी को पुनः जन-जन तक पहुँचाना चाहता है। तुलसी ने हतास जनमानस में राम नाम का संचार कर उसे ऊर्जा ही नहीं अस्मिता भी प्रदान की थी।

गूंजो फिर बनकर राम-राम,
रणवीरों के मन में अकाम
नव राष्ट्र जागरण के युग में
तुलसी गूँजो तुम धाम-धाम...

17. *संजीवनी* (1983)—यह कवि सोहनलाल द्विवेदी की एक प्रौढ़ रचना है, जो उनके देहावसान से मात्र पाँच वर्ष पूर्व प्रकाशित हुई थी। यह खंड काव्य कच-देवयानी प्रसंग पर आधारित है। इसमें कथानक को ग्यारह सर्गों में विभाजित किया गया है। वे हैं—स्वर्ग, संघर्ष, प्रयाण, तपोवन, संशय, प्रतिशोध, सिद्धि, अनुताप, अंतर्द्वन्द्व, अभिशाप और विराम। इन सर्गों का नामकरण उनके वर्णित प्रमुख घटनाओं के आधार पर किया गया है। संजीवनी काव्य में कथानक का चयन ही उनकी धर्म्य नैतिक मानसिकता का प्रमाण है। कुंवर चंद्र प्रकाश सिंह के अनुसार, "अतीत से पुराणों की परंपरा के द्वारा जो महिमामय आख्यान हम तक आए हैं, उनमें कच-देवयानी की गाथा भारत के आदर्शनिष्ठ मानस के इतिहास की एक महत्तम उपलब्धि है... द्विवेदी जी की लेखनी के कौशल ने इस पवित्र गाथा को आदर्श के रंगों की अनेक आभाओं से मंडित कर प्रस्तुत किया है।"

संजीवनी एक प्रतीक-काव्य है, जिसमें 'कच' मानवीय संकल्प और आस्था का प्रतीक है, तो 'देवयानी' मानवोचित कोमल कामना का। कच-देवयानी के कथानक से जो निष्कर्ष प्रस्तुत किया है, वह उसके अतीत-प्रेम को आधुनिकता बोध से जोड़ देता है और वह नव संकल्पों के गायक बन जाते हैं।

नव जीवन नव चेतना देश में आए
नव अरुणोदय की प्रभा क्षितिज पर आए।

विराग सर्ग ...

श्री शंभुनाथ *संजीवनी* के संवंध में लिखते हैं, "वस्तुतः संजीवनी का रचना संसार न सिर्फ़ संकल्प और कामना के द्वंद्व को रेखांकित करता है, अपितु प्रेम के समक्ष श्रेय की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए एक स्वस्थ एवं सार्थक जीवन-दर्शन के समादार को भी प्रस्तुत करता है। इसके प्रश्न ताज़े हैं और इसका उत्तर है शक्ति।" (शुभांशसा)

अंतिम सर्ग में कवि जिस शाश्वत सत्य की ओर संकेत करता है, वह ही इस रहस्य की कुंजी है–

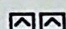
है यहीं स्वर्ग, अपवर्ग, नरक भूतल में
कुछ धरा नहीं अन्यत्र किसी भी स्थल में।
सुर-असुर एक कल्पना मात्र है मन की,
यह एक विभाजन रेखा, गुण-दुर्गुण की।

× × ×

हम में ही सुर है असुर देव-दानव भी
है सब का मूलाधार एक मानव ही।

(विराम सर्ग)

श्री शंभुनाथ के शब्दों में, "वस्तुतः *संजीवनी* का रचना-संचार (कच-देवयानी के प्रतीक रूप में) न केवल संकल्प और कामना के द्वंद्व को रेखांकित करता है, अपितु प्रेय के समक्ष श्रेय की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए स्वस्थ और सार्थक जीवन-दर्शन का समाहार भी प्रस्तुत करता है।" इसमें निश्चय ही काल निरपेक्ष राष्ट्रीय चेतना की प्रतिनिधि कला को सम्यक् उन्मेष के दर्शन होते हैं।



3

संपादित कृतियाँ

पं. सोहनलाल द्विवेदी जी ने जहाँ कई पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया, वहीं 1944 में एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ* का संपादन भी किया। उन्होंने लखनऊ से प्रकाशित *दैनिक अधिकार* (1938-44) और प्रयाग से प्रकाशित *बाल सखा* (1957-68) का भी सफल संपादन किया था।

1. *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ* (1944)–यह ग्रंथ महात्मा गाँधी की हीरक जयंती के अवसर पर 1944 में, लखनऊ से प्रकाशित हुआ था, जिसके संपादन का दायित्व पं. सोहनलाल द्विवेदी को सौंपा गया। 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' के सिलसिले में महात्मा गाँधी और कस्तूरबा गाँधी को आगाख़ाँ महल में नज़रबंद कर दिया गया था। वहीं 22 फ़रवरी 1944 को 'बा' का असामयिक निधन हो गया। कुछ ही समय पूर्व श्री महादेव देसाई का स्वर्गवास हो गया था। गाँधी जी अब मनःस्थिति से अस्वस्थ से हो गए थे। ब्रिटिश सरकार ने 6 मई 1944 को गाँधी जी को रिहा कर दिया। युवा कवि सोहनलाल द्विवेदी जी ने महात्मा जी की अमृत जयंती (पचहत्तरवीं वर्षगाँठ) के अवसर पर उन्हें सम्मानित करने के लिए एक अभिनंदन ग्रंथ भेंट करने की महती योजना बनाई। प्रसिद्ध उद्योगपति और गाँधी भक्त, श्री घनश्याम दास बिड़ला ने इसका संरक्षक बनना स्वीकार कर लिया। परामर्शदात्री समिति में सर्व श्री महादेव शास्त्री, मैथिलीशरण गुप्त, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, झबेर चंद मेघाणी, माधव गोपाल देशमुख सत्यनारायण, प्रो. एन. के. सिद्धांत तथा मदनशांति भिक्षु जैसे प्रतिष्ठित विद्वानों ने शामिल होना स्वीकार किया।

2 अक्टूबर 1944 को *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ* अपनी भव्य साज-सज्जा के साथ प्रकाशित हुआ। इसकी भूमिका सर्वपल्ली राधाकृष्ण ने लिखी, जिसमें उन्होंने लिखा, "जब तक सभ्यता का चिह्न संसार में रहेगा, गाँधी जी का नाम आदर के साथ स्मरण किया जाएगा।" (His name will continue to be honouerd as long as civilizations last.)

इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि यह समस्त ग्रंथ भारत की विभिन्न भाषाओं और कई विदेशी भाषाओं में श्रद्धेय गाँधी जी को काव्यांजलि है। इसमें हिन्दी, संस्कृत के अतिरिक्त उर्दू, बाङ्ला, सिंधी, मराठी, गुजराती कन्नड, कनारसी, तेलुगु,

तमिल, मलयालम तथा मैथिली और उड़िया के मूर्द्धन्य कवियों की रचनाएँ समाविष्ट हैं। इसके साथ ही अंग्रेज़ी तथा चीनी भाषा के कवियों की भी गाँधी संबंधी रचनाएँ संकलित हैं। हिन्दीतर भाषाओं की रचनाओं के हिन्दी अनुवाद भी उतने ही ललित हैं। प्रायः सभी रचनाएँ देवनागरी लिपि में हैं। इसमें अनेक नयनाभिराम भव्य चित्र भी ग्रंथ की शोभा को द्विगुणित कर रहे हैं, जिनके कलाकार हैं कुमारिल स्वामी श्री मतीदेवी वर्मा एवं सुधीर, श्री कनु गाँधी, खास्तगीर। कुल मिलाकर ग्रंथ में एक सौ तीस कविताएँ हैं, जिनमें हिन्दी के 50 कवियों की कविताएँ शामिल की गई हैं।

इस ग्रंथ के संबंध में स्वयं गाँधी जी ने पं. सोहनलाल द्विवेदी को पत्र लिखा था–

सेवाग्राम

भाई सोहनलाल जी,

आपकी कृति के गुण दोष के बारे में मैं क्या कहूँ? काव्य की परीक्षा करने की मेरे में कोई योग्यता नहीं पाता। मेरी स्तुती में काव्य लिखे गए हैं, उस बारे में मैं क्या कह सकता हूँ? हाँ, इतना कह सकता हूँ सही, आपने परिश्रम काफ़ी उठाया है। कोई भी शुभ परिश्रम व्यर्थ नहीं जाता है।

बापू का आशीर्वाद

16.10.44

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन ने ग्रंथ के संबंध में लिखा था, "*गाँधी अभिनंदन ग्रंथ* हमारी लालसा का प्रतीक होगा। सोहनलाल जी की यह संकलित कृति हिन्दी साहित्य की मूल्यावान संपत्ति होगी।" पं. सोहनलाल द्विवेदी ने ग्रंथ की भूमिका में लिखा है, "इस ग्रंथ में अंतर्प्रेरणा से लिखी हुई रचनाएँ ही संकलित की गई हैं, बहिर्प्रेरणा से लिखा कर नहीं। अतः यह अपने सच्चे अर्थ में अभिनंदन ग्रंथ है।"

इस ऐतिहासिक ग्रंथ की विशेषता और लोकप्रियता यह रही कि इसके कुछ ही वर्षों में तीन संस्करण मुद्रित हो गए। इस ग्रंथ का संपादन कर पं. सोहनलाल द्विवेदी जी ने जहाँ विश्व वंद्य महात्मा गाँधी की गौरव गाथा को देश-विदेश की विभिन्न भाषाओं की कविताओं के माध्यम से वाणी दी, वहीं हिन्दी भाषा की गरिमा को भी अभिवृद्ध किया।

2. *जय गाँधी* (1956)–सोहनलाल द्विवेदी की लोकप्रिय श्रेष्ठ 60 काव्य रचनाओं का एक सुंदर संकलन है। इनमें पूज्य बापू और राष्ट्र प्रेम पर लिखित चुनी हुई रचनाएँ संगृहीत हैं। कवि ने स्वयं अपनी रचनाओं का संपादन किया है। परिचय में वे लिखते हैं, "जय गाँधी में मैंने लोकप्रिय राष्ट्रीय रचनाओं को एक स्थान में संजोने का प्रयास किया है। राष्ट्र की मुक्ति के अहिंसात्मक अभियान में मेरा कवि एक सच्चे सैनिक के समान सदैव आगे बढ़ा है। राष्ट्र की व्यथा से व्यथित तथा

आनंद से आंदोलित हुआ है। अतः राष्ट्र की विविध गतिविधियों का चित्रांकन इन रचनाओं में मिलना स्वाभाविक है।

इस ग्रंथ की भूमिका में श्री घनश्याम दास बिड़ला लिखते हैं, "बापू का यह साहित्यिक स्मारक अनमोल है। *जय गाँधी* की कविताओं की एक बड़ी विशिष्टता यह है कि इसमें इस प्रकार की रचनाओं का बाहुल्य है, जिनसे पुण्य श्लोक महात्मा जी का अखंड आलोक हममें जाग्रत रहे। इस दृष्टि से ये रचनाएँ विशेषतः अभिनंदनीय हैं उस देश के नर-नारियों के लिए, जो भावनाप्रधान है और बापू को भूल नहीं पाता।"

3. *गाँधी शतदल* (1969)—यह ग्रंथ भी गांधी जी के प्रति भारतीय कवियों द्वारा दी गई श्रद्धांजलियों का एक उद्‌भुत संकलन है, जिसका संपादन पं. सोहनलाल द्विवेदी जी ने किया था। इसे भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा 1969 ई. में गाँधी जी की जन्मशती के अवसर पर प्रकाशित किया था। महात्मा गाँधी ने देश की राजनीति पर ही नहीं, साहित्य पर भी गहरा प्रभाव डाला था। प्रायः सभी भारतीय भाषाओं के कवियों ने गाँधी जी के प्रति अपनी आस्था के सुमन अर्पित किए थे। इस ग्रंथ में 101 कविताओं का संकलन है। इनमें जो भावसाम्य है, वह देश की मूलभूत एकता का प्रतीक है। ग्रंथ में विभिन्न भाषाओं में मूल कविताएँ देवनागरी लिपि में दी गई हैं। उनके साथ उनका भावार्थ हिन्दी भाषा में दिया गया है।

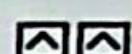
ग्रंथ में हिन्दी के 28 प्रख्यात कवियों की रचनाओं का चयन किया गया है, जिनमें रामधारी सिंह दिनकर, श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान, जगन्नाथ दास रत्नाकर, गिरिजा कुमार माथुर, उदयशंकर भट्ट, नरेन्द्र शर्मा, प्रभाकर माचवे, हरिवंश राय बच्चन, माखनलाल चतुर्वेदी, सुमित्रानंदन पंत तथा भवानी प्रसाद मिश्र प्रभृति कवियों की रचनाएँ संगृहीत हैं। हिन्दी के अतिरिक्त असमिया, ओड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिष़, तेलुगु, पंजाबी, बाङ्‌ला, मराठी, मलयाळम् और सिन्धी के कवियों की रचनाओं को भी इस संकलन में समुचित स्थान दिया गया है। गाँधी जी के प्रति कवि-संपादक द्विवेदी की यह एक साहित्यिक श्रद्धांजलि है।

4. *झंडा ऊँचा रहे हमारा* (1972)—देश की स्वतंत्रता की रजत जयंती के अवसर पर 1972 ई. में श्री सोहनलाल द्विवेदी ने इस काव्य-ग्रंथ का संपादन किया था। इसमें राष्ट्र-ध्वज की वंदना में रचित कविताओं का संकलन है, जो द्विवेदी जी के युग-बोध की प्रासंगिकता का सुंदर साक्ष्य है।

इसके संपादकीय में द्विवेदी जी ने लिखा है, "...जिन गीतों के गायन से जन-जन के मन प्राण झंकृत नहीं होते, उनका गाना व्यर्थ हो जाता है। जिस गीत को अधिक जनता समझ सके, भावों में डूब सके, उसके स्वप्न को आकांक्षा को मूर्त रूप देने में तत्पर हो सके, निश्चय ही वही गीत अधिक सार्थक होता है।" श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' द्वारा रचित 'झंडा ऊँचा रहे हमारा' गीत ने सारे राष्ट्र में

क्रांति की एक लहर पैदा कर दी थी। स्कूलों और पाठशालाओं में प्रार्थना के समय इसे गाया जाता था।

इस प्रकार हम देखते है कि कवि सोहनलाल द्विवेदी का चिन्तन, मनन और लेखन भारत और भारतीयता को समर्पित था, उनके लेखन की परिधि का केन्द्र बिन्दु 'भारत राष्ट्र' ही था। उन्होंने स्वयं इसे स्वीकारते हुए लिखा है, "मेरी राष्ट्रीयता भारत भूमि की परिक्रमा करती है। भारतीय संस्कृति उसके प्राण है।"



4

बालगीत

सोहनलाल द्विवेदी सामान्यतः राष्ट्रीय चेतना के गायक कवि के रूप में विख्यात हैं, किन्तु उन्होंने अपनी कविताओं का प्रारंभ बालगीतों से ही किया था। और उनका लेखन कार्य 1920 ई. से ही आरंभ हो गया था। उपलब्ध साक्ष्यों के अनुसार, इनकी प्रथम बाल कविता 'बिलैया' जून 1929 ई. में *शिशु* नामक बाल पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। शीर्षक था 'मैंने एक बिलैया पाली, आधी भूरी आधी काली'। पुस्तक रूप में बालगीतों की उनकी पहली रचना *दूध बताशा* 1930 ई. में प्रकाशित हुई। इसके बाद भी उनकी बाल साहित्य की अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुई। उन्हें बच्चों से वास्तविक लगाव था। आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी जी ने बनारसी दास चतुर्वेदी को लिखे एक पत्र में कहा था, "हिन्दी में बड़े-बड़े साहित्यकार तो हैं किन्तु बच्चों के माई-बाप केवल सोहनलाल द्विवेदी जी ही हैं।" (*एक कवि, एक देश,* पृ. 246)

सोहनलाल द्विवेदी की रचनाओं में बालगीत संग्रहों की संख्या सबसे अधिक है। इनमें देश-प्रेम, प्रकृति-प्रेम, वीरता, निर्भीकता, दृढ़ता, संकल्प और सदाचार जैसे विषयों को माध्यम बनाकर उन्होंने अनेक बालगीतों और बाल साहित्य की रचना की। उनके बालगीतों की विशेषता मात्र मनोरंजन नहीं है, बल्कि उनके पीछे राष्ट्र प्रेम छिपा है। द्विवेदी जी के साहित्य का देवता 'राष्ट्र' ही है। इसलिए उनके बाल साहित्य में भी राष्ट्रीयता की ही झलक मिलती है। आरंभ से ही बाल-रुचि की उनकी रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थी। प्रत्येक विद्यालय के छात्रों और शिक्षकों में बाल साहित्य के रचयिता कवि के रूप में द्विवेदी जी का नाम विख्यात था। *शिशु* एवं *बालसखा* जैसी पत्रिकाओं के प्रायः सभी अंकों में उनकी रचनाएँ छपती थी। *बालसखा* की अपनी रचनाओं के कारण वे हिन्दी पाठकों में ख़ूब लोकप्रिय हुए। *बालसखा* की ख्याति का यह प्रभाव पड़ा कि इसके व्यवस्थापकों ने इनसे इस पत्रिका के संपादन का प्रस्ताव रखा। 1956 ई. में सोहनलाल द्विवेदी जी *बालसखा* के प्रधान संपादक बन गए। संपादक बनते ही इन्होंने पूरे मनोयोग से इसे और लोकप्रिय बनाने के प्रयास किए। पत्रिका की काया-पलट हो गई। इन्होंने इसमें जहाँ नए स्तंभ जोड़े, वहीं 'बाल चित्रावली' भी इसमें शामिल कर इसकी उपयोगिता और लोकप्रियता को द्विगुणित कर दिया। इसके परिणामस्वरूप इसकी ग्राहक संख्या

में भी आशातीत वृद्धि हुई। विश्वेश्वर प्रसाद लिखते हैं कि पहली बार होली, दीवाली के विशेषांक बड़ी तड़क-भड़क से निकाले गए...महामना मदनमोहन मालवीय और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर विशेषांक का उल्लेख करना समीचीन होगा। न जाने कहाँ-कहाँ से इन महानुभावों की विषय सामग्री खोज-खोजकर द्विवेदी जी ले आए और *बालसखा* को सजा-सँवारकर बच्चों के हाथों में दे दिया। इससे संपादक और पत्रिका दोनों का गौरव, दोनों की लोकप्रियता बढ़ी ही।'

(एक कवि, एक देश)

दस वर्ष तक वे *बालसखा* के संपादक रहे।

सोहनलाल द्विवेदी ने अपनी पहली बालगीतों की रचना *दूध बताशा* (1930 ई.) के अतिरिक्त, *पाँच कहानियाँ* (1940 ई.), *सात कहानियाँ* (1940 ई.), *मोदक* (1940 ई.) और *किसान* (1940 ई.) की भी रचना की। गाँधी जी से द्विवेदी जी पूर्ण रूप से प्रभावित थे। इसलिए उन्होंने राष्ट्र के शिशुओं के लिए भी *बिगुल* (1947 ई.) की रचना की।

स्वाधीनता के बाद भी वे शिशुओं और किशोरों के लिए लिखते रहे। 1949 ई. में उन्होंने *शिशु भारती* और 1953 ई. में *बाल भारती* नामक बालगीत-संग्रहों की रचना की। इस प्रकार वे बालगीतों के 'जनक' बन गए। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने उनके संबंध में ठीक ही कहा था 'हम लोगों में से आप ही बाल साहित्य के जनक हैं।'

1953 ई. में कवि ने 'झरना' के माध्यम से बाल रुचि की अनेक रचनाएँ उसमें सम्मिलित कीं। सन् 1956 ई. में *बच्चों के बापू* शीर्षक से इनका बालगीत संग्रह आया। डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा ने लिखा है कि इसमें 'कवि के शिशु मन का बापू के साथ आलाप-संलाप, हास-परिहास और नकल उतारने का बाल सुलभ शोक शब्द-चित्रों में साकार हो उठा। चार-छह या आठ लघु पंक्तियों के बाल भाषा में तुतलाते हुए इन गीतों में बापू के व्यक्तित्व का जो स्वरूप निखरा, उसे देखकर तरुण-प्रौढ़ और वृद्ध पाठक भी आत्मविभोर हो उठे।'

1957 ई. में *बाँसुरी* तथा *हँसो हँसाओ*, कुछ रसीले, चटकीले गीत नन्हें-मुन्नों के लिए लिखे। उन्होंने जहाँ 1956 ई. में *बच्चों के बापू* लिखा था, वहीं उन्होंने 1963 ई. में प्रकाशित एक बालगीत-संग्रह *चाचा नेहरू* प्रस्तुत किया, जो बच्चों में काफ़ी, लोकप्रिय रहा। 1963 ई. में ही *दस कहानियाँ* बालगीतों के रूप में प्रकाशित हुईं। 1969 ई. में *शीशु गीत* नाम से बच्चों के लिए लोकप्रिय गीत लिखे। यह संग्रह अल्पवयस्क शिशुओं के लिए है।

सोहनलाल द्विवेदी ने तरुणों और किशोरों के लिए स्वदेश प्रेम से आपूरित 1972 ई. में भारतीय स्वतंत्रता की रजत जयंती के अवसर पर *यह मेरा हिन्दुस्तान*

है नामक गीत-संग्रह प्रस्तुत किया। छोटे-छोटे बच्चों के लिए इन्होंने अनेक गीत-संग्रह सरल और बाल सुलभ भाषा में लिखे।

कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

'हमारा प्यारा भारत वर्ष,
जगत से न्यारा भारत वर्ष।
हिमालय मुकुट शीश शृंगार,
हृदय गंगा यमुना का हार।
नयन का तारा भारत वर्ष
हमारा प्यारा भारत वर्ष।
धरा है सुन्दर स्वर्ग समान,
गगन है रवि-शशि से द्युतिमान।
सींचती पवन सुधा से प्राण,
प्राणमय सारा भारत वर्ष
हमारा प्यारा भारत वर्ष।'

बच्चों के लिए उन्होंने उन्हीं विषयों और वस्तुओं को अपने काव्य का माध्यम बनाया, जिन्हें बच्चे अपने परिवेश और दैनिक जीवन में रोज़ाना देखते हैं, जो उनकी रुचि के हैं और उनमें जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं। बाल मनोविज्ञान का उन्हें पूर्ण ज्ञान था। उनके बालगीत स्कूलों की हिन्दी पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित थे। प्राथमिक पाठशाला का प्रत्येक विद्यार्थी उनकी कविताओं और उनके गीतों से परिचित था। घोड़े पर उनका यह गीत देखिए–

चल बे घोड़े चल बे चल
इधर-उधर मत बहुत मचल।
बाएँ चल, मत दाएं चल,
सीधे पैर जमाए चल।
बहक नहीं मत अधिक मचल,
चल बे घोड़े चल बे चल।

1970 ई. में उन्होंने *गाँधी गीत* की रचना की, जो छोटे-छोटे बच्चों के लिए एक अनुपम उपहार के रूप में सामने आया। इसमें 21 गीत संगृहीत हैं। प्रायः सभी गीत गाँधी जी के महान व्यक्तित्व, मातृभूमि और चर्खे पर आधारित हैं। 'हमारे नेता' गीत में बापू के संबंध में ये शब्द द्रष्टव्य है–

देश प्रेम का मंत्र सुनाकर
जिसने हमें जगाया है,

सत्य अहिंसा का बल देकर
भय को दूर भगाया है
कर सदियों की दूर दासता
जिसने हमें उबारा है
जो भारत का भाग्य विधाता
नेता वही हमारा है।

सोहनलाल द्विवेदी का कहना था 'देश के भावी नागरिकों को अपने देश से परिचित कराना ही पर्याप्त नहीं, उनमें देश के प्रति अपने कर्तव्य का बोध भी कराना आवश्यक है। इसलिए उन्होंने *जय-जय स्वदेश* नाम से 26 गीतों का एक संकलन 1974 ई. में तैयार किया, जो इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। उसमें बच्चों के लिए बड़े ही सुन्दर गीत हैं, जिनमें प्रकृति का सरल और स्वाभाविक चित्रण है।

पर्वत हो चाहे हो बादल,
सब पर जल बरसाता बादल।
सूखा हो चाहे हो गीला
सब पर जल बरसाता बादल।

श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' लिखते हैं कि "हिन्दी साहित्य में द्विवेदी जी 'बाल साहित्य' के अप्रतिम कवि है, आचार्य है, पंडित हैं। एक शब्द में कहूँ—बाल साहित्य के 'जनक' हैं। टैगोर की भाँति द्विवेदी जी ने भी बच्चों की भाषा में, बच्चों में डूबकर बच्चों के लिए रचनाएँ लिखी हैं। यदि रवीन्द्र नाथ ठाकुर का 'बच्चा' अपने को 'आमी आज कानाई मास्टर' समझता है तो द्विवेदी जी का बालक भी 'देश की सेना का एक सिपाही' बनने का स्वप्न देखता है।" वास्तव में बाल साहित्य वही लिख सकता है, जिसकी प्रौढ़ता में भी बच्चों का सामान हो। द्विवेदी जी ने बाल साहित्य के माध्यम से बच्चों में राष्ट्रीय संस्कार भरने का पूरा प्रयास किया है। इस प्रयास में उनके सामने एक ही लक्ष्य रहा है—देश के बालक बड़े होकर कुशल राष्ट्र-रथी बनें। उनमें देशप्रेम के भाव जगें और वे गर्व से कह सकें—

यह भारत वर्ष हमारा है
हमको प्राणों से प्यारा है।

1974 ई. में उन्होंने *तितली रानी*, 1976 में *हुआ सवेरा उठो-उठो* तथा *एक गुलाब* नामक बाल सुलभ काव्य रचनाएँ की जो नन्हें मुन्ने बच्चों के मन में जहाँ प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद का संचार करती हैं, वहीं उनके लिए शिक्षाप्रद भी होती हैं। बाल मन पर जो संस्कार पड़ते हैं, वे आजीवन स्थायी होते हैं और उन्हीं से उनका व्यवहार और उनके चरित्र का निर्माण होता है। इसीलिए द्विवेदी जी बालकों में राष्ट्रीयता के संस्कार डालने के लिए बच्चों के गीत लिखते थे और उन्हीं की

सरल भाषा में लिखते थे। वह कार्य उनका राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान था।

नंदन के संपादक श्री जयप्रकाश भारती ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ *हिन्दी की सौ श्रेष्ठ पुस्तकें* में कवि सोहनलाल द्विवेदी की बाल कविताओं के संबंध में लिखा है– "बच्चों के लिए लिखी गई उनकी कविताएँ साहित्य की अपूर्व निधि हैं। उन्होंने देश-प्रेम प्रकृति प्रेम, सदाचार साहस, वीरता, संकल्प और संस्कृति के प्रति लगाव जैसे अनेक पक्ष बाल गीतों में साकार किए हैं। उनकी ये कविताएँ इक्कीसवीं सदी में भी गूँजती रहेगी।"

अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष (1979 ई.) के अवसर पर भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय द्वारा उनके बीस गीतों का एक संग्रह *गीत भारती* प्रकाशित किया गया, जिसमें बच्चों के लिए प्रेरणादायक चुने हुए गीतों को संकलित किया गया है। द्विवेदी जी आयुपर्यन्त बच्चों के लिए कुछ-न-कुछ अवश्य लिखते रहे। 1983 में उन्होंने *सुनो कहानी* लिखा, जिसमें पाँच कथा गीत सम्मिलित हैं, जो रोचक तो है ही, शिक्षाप्रद भी हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने *फूल हमेशा मुस्काता* तथा *रामू की बिल्ली* जैसे अनेक बालगीत-संग्रह भी लिखे। इस प्रकार उनके काव्य कोश की अधिकांश निधियाँ देश की नई पौध को समर्पित हैं। बच्चों और किशोरों के लिए लिखना वे अपना कर्तव्य मानते थे। श्री जयप्रकाश भारती ने एक बार उनसे प्रश्न किया कि आपने बच्चों के लिए क्यों लिखा? तो सोहनलाल द्विवेदी जी बोले, "सभी तो बड़ों के लिए लिखते हैं, किसी को बालकों और किशोरों के लिए भी तो लिखना चाहिए। मैं तो समझता हूँ कि जो कुछ मैंने लिखा है, वह सभी बाल साहित्य है।" उनका कहना था कि भारत का भविष्य देश के नन्हे कर्णधारों के हाथ में है। अतः हमें उन्हें ऐसी पाठ्य सामग्री देनी है, जिससे वे इस महान दायित्व को उठाने में समर्थ बनें।

उनकी शिक्षाप्रद रचनाएँ बाल मन पर कितना प्रभाव डालती थी, यह तथ्य तत्कालीन शिक्षाशास्त्रियों और बाल मनोविज्ञानियों से छिपा नहीं था। इसीलिए तो स्कूली पाठ्यपुस्तकों में उनके गीत सम्मिलित करना शिक्षा विभाग के लिए अपरिहार्य बन गया था। बच्चों के लिए यह गीत देखिए–

खेलोगे अगर तुम फूल से तो सुगंध फैलाओगे,
खेलोगे अगर तुम धूल से तो गंदे बन जाओगे।
कौए का यदि साथ करोगे तो बोलोगे कड़वे बोल,
कोयल का यदि साथ करोगे तो तुम दोगे मिस्री घोल।
जैसा भी रंग रंगना चाहो घोल लो वैसा ही रंग,
अगर बड़े तुम बनना चाहो तो तुम रहो बड़ों के संग।

पं. सोहनलाल द्विवेदी जी की कविताओं के बालोपयोगी एवं बाल-शिक्षण में सहायक तत्त्वों से प्रभावित होकर ही डॉ. संपूर्णानंद जी जैसे दार्शनिक विचारक को

भी यह कहना पड़ा, "पं. सांहन लाल द्विवेदी जी ने यों तो सभी प्रकार की ऊँचे दर्जे की कविताएँ लिखी हैं, जिनमें उनके भावों की गंभीरता तथा भाषा का प्रभुत्व प्रकट होता है, लेकिन बाल साहित्य तो उनका ख़ास क्षेत्र है। जो लोग इस बात को मानते हैं कि सद्विचारों का अंकुर बालकों में बचपन से ही उगना चाहिए– उन्हें द्विवेदी जी का कृतज्ञ होना चाहिए और उनकी कृतियों को अपनाना चाहिए। यही कारण है कि उनकी कविताएँ वर्षों से पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित की जाती रही है।"

बाल भारती में संकलित 'उमंग' कविता में वच्चों के वीर सेनानी और देश-प्रेमी बनने के प्रति प्रेरणा देने के लिए ये पंक्तियाँ देखिए–

जी में होती है उमंग मैं होता रण का सेनानी,
मातृभूमि पर कभी उमड़ते जब बैरी चढ़ मनमानी।
सभी हिचकते होते जब करने को शीश दान अपना,
मैं कर शीश दान अपना पूरा करता माँ का सपना।

उन्होंने अपनी एक कविता में एक निर्भीक बालक का चित्र उकेरा है, जिसे भारतमाता से सच्चा प्रेम है–

भय से हम कभी न डोलेंगे
अपनी ताक़त को तोलेंगे।
माता के बंधन खोलेंगे
अपना सिर भेंट चढ़ाएँगे,
भारत की ध्वजा उठाएँगे।

कविवर द्विवेदी जी का मूल मंत्र था 'राष्ट्र प्रेम' उनकी सभी रचनाओं, गीतों और बालगीतों में यही प्रेम प्रतिबिम्बित होता है। वे ईश-प्रार्थना करते हुए भी भगवान से यही आराधना करते हैं कि वह उन्हें शक्तिमान बनाए और उनके अंदर देश-प्रेम की अग्नि प्रज्वलित करें।

मुझे शक्ति दो गीत गाऊँ तुम्हारे,
मुझे भक्ति दो काम आऊँ तुम्हारे।
मुझे आग दो देश का हित करूँ मैं,
मुझे त्याग दो देश का हित करूँ मैं।
अपनी न जय चाहूँ मैं, जय मातृभूमि की हो
वह देशभक्ति मन में वह प्रेम प्यार दो।

देश-प्रेम के साथ ही कवि ने प्रकृति, उसके अवयवों-पर्वतों, सागरों, सरिताओं, तरंगों, पृथ्वी आदि के उदाहरण देकर बच्चों को ऊँचा उठने, धीर, गंभीर, उदार और उत्साही बनने का उपदेश भी दिया है–

पर्वत कहता शीश उठाकर
तुम भी ऊँचे बन जाओ।
सागर कहता है लहराकर
मन में गहराई लाओ।
समझ रहे हो क्या कहती है
उठ-उठ, गिर गिर तरल तरंग।
भर लो भर लो अपने मन में,
मीठी मीठी मृदुल उमंग।
पृथ्वी कहती धैर्य न छोड़ो,
कितना ही हो सिर पर भार
नभ कहता है फैलो इतना
ढक लो तुम सारा संसार।

श्री प्रकाश मनु कहते हैं कि "राष्ट्रीयता श्री सोहनलाल द्विवेदी के लिए एक ऐसी ताला बंद अलमारी बन गई, जिसमें उन्हें क़ैद करके छुट्टी पाली गई। सोहनलाल द्विवेदी की कविताओं के तमाम बढ़िया रंग, शेड्स और मूड्स इसी स्थिर इमेज़ या ढाँचे के कारण नष्ट हो गए। उनकी कविताओं की ताज़गी और सहजता को कम पहचाना गया और उनकी जीवंतता और ज़िन्दादिली की जितनी दाद मिलनी चाहिए थी, नहीं मिली।" उन्होंने न केवल बढ़िया बाल कविताएँ लिखीं, बल्कि बाल कविता को एक सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने में बड़ी भूमिका निभाई।

सोहनलाल द्विवेदी जी ने अपने बाल्यकाल की स्मृतियों का सजीव चित्रण किया है। घर के आँगन में खड़ा नीम का पेड़ आज भी उनके स्मृति पटल पर उन दिनों की याद ताज़ा कर रहा है, जब उसमें झूला डालकर वह पैंग बढ़ाया करते थे।

याद आ रहा है वह घर अपना,
लगता है जैसे हो सपना।
पेड़ नीम का जहाँ खड़ा था,
जो वर्षों से यहीं बढ़ा था
जिसमें डाल डालकर झूला
मैं अपने बचपन में झूला।
इसमें ही रहते थे दादा,
पहना करते कुरता सादा।

वच्चों के लिए 'छाया' एक कौतुहल है, विस्मयकारी प्रतिरूप है। द्विवेदी जी बाल मन की इस भावना को कितने सरल और सहज रूप ये प्रस्तुत करते हैं—

पीछे-पीछे कौन आ रही?
संग-संग यह कौन आ रही?

दाएँ जाती, बाएँ जाती
लम्बी कभी-कभी है छोटी,
दुबली कभी, कभी है मोटी।
तरह-तरह के रूप बनाती,
साथ-साथ पर हर दम आती।

बच्चों के बापू पुस्तक में इन्होंने बापू को बच्चों की ही दृष्टि से देखा है। उसी रूप में उनका बखान क्रिया है।

अहा टहलने तुम हो जाते पहने खटपट चट्टी,
मेरे भी हैं पास चट्टियाँ, पर टूटी हैं पट्टी।
बापू चलते तेज़ बहुत तुम, मैं न भाग सकता हूँ,
मैं क्या थकता चाचा जी को भी पाग थकता हूँ।
वाह बड़ी अच्छी टोपी है तुमने आज लगाई,
बापू कितने पैसे देकर तुमने इसे मँगाई।
बापू तुम को सभी मानते दुनिया शीश झुकाती,
पर मुँह पुपला देख तुम्हारा मुझे हँसी आ जाती।

बच्चों के लिए लिखा गया उनका एक प्रार्थना गीत है, जिसे प्रातःकाल पाठशाला के छात्रों द्वारा गाया जाता है—

मुझे शक्ति दो, गीत गाऊँ तुम्हारे,
मुझे भक्ति दो काम आऊँ तुम्हारे।
मुझे आग दो देश का हित करूं मैं,
मुझे त्याग दो देश के हित मरूं मैं

जबलपुर के समीप की नर्मदा नदी के जल-प्रपात का नाम 'धुआँधार' है। द्विवेदी जी जब इस मनोरम प्रपात को देखने गए तो इसे देखकर वे इतने प्रभावित हुए कि उस पर बच्चों की भाषा में लिखा—

जल बहता नचता गाता-सा, बच्चों सा शोर मचाता-सा
है कभी सामने भगता-सा, तो कभी किनारे लगता-सा,
है कभी निकलने लगता-सा, तो कभी बिलखने लगता-सा
पे कभी हृदय बहलाता-सा, तो कभी हृदय दहलाता-सा,
कल कल, छल छल, कल कल छल छल
यों धुँआधार में बहता जल।

बाल साहित्य लिखना निश्चय ही बड़ा कठिन कार्य है। भाषा और भावों में सरलता, स्वाभाविकता, अभिव्यक्ति में भोलापन, या यों कहिए कि बच्चों के लिए

बच्चा बनकर ही लिखना होता है, जो सबके बस की बात नहीं है। पं. भगवती प्रसाद वाजपेयी ने ठीक ही लिखा है, "भाषा क्लिष्ट हो जाए, तो लेखक को अपनी कुर्सी छोड़नी पड़े। भावों में स्वाभाविक सारल्य न हो–अभिव्यंजना में भोलापन न झलक पड़े तो लेखक केवल कलाकार नहीं घसियारा बन जाएगा।" पं. सोहनलाल द्विवेदी में बाल साहित्य लेखन के सभी गुण विद्यमान थे। नर्मदा प्रसाद खरे के अनुसार, "सोहनलाल जी द्विवेदी बच्चों के महाकवि हैं।" द्विवेदी जी की कविताएँ बालकों के हृदय में पैठकर, उनके हृदय मन में उतरकर उनके सहज स्वभाव से तादात्म्य स्थापित करती हैं। द्विवेदी की कविताएँ हाथ लगते ही बच्चे गुनगुनाने लगते है, गाने लगते हैं, झूमने लगते हैं और बात की बात में उनके कंठ में बस जाती हैं। यही द्विवेदी जी की सफलता है। उनके बालगीतों का प्रमुख उद्देश्य यह है कि नन्हे-मुन्नों में नई स्फूति और नया रक्त संचार हो। उनका एक गीत है–'उठो-उठो' उसमें वह प्रातःकालीन प्रकृति के सौन्दर्य, चिड़ियों की चहचाहट, रंग-बिरंगे फूलों, पत्तों और डालियों का संदर्भ देते हुए बच्चों से भी उठने को कह रहा है। साथ ही उन्हें भारत माँ की सुंदर झाँकी की याद दिलाना नहीं भूलता। कितना अद्‌भुत सामंजस्य है–

पत्ती डोली
चिड़िया बोली
हुआ सबेरा, उठो, उठो।
छाई लाली
अहा निराली
मिटा अँधेरा उठो, उठो।
आलस त्यागो,
प्यारे जागो,
आँखें खोलो, उठो, उठो
देखो झाँको
भारत माँ की
जय जय बोलो, उठो, उठो।

'फूल और काँटे' शीर्षक बालगीत में प्यार और घृणा का मूल भूत अंतर स्पष्ट करते हुए परोक्ष रूप से 'बुराई' त्याग कर 'अच्छाई' अपनाने का संदेश निहित है–

फूल फूलकर हँसते रहते
नित सुगंध फैलाते हैं।
जो आते हैं पास उन्हीं के

मन में सुख पहुँचाते हैं
कांटे नोक निकाले रहते
बिलकुल नहीं लजाते हैं
जो आते हैं पास उन्हीं के
तन में झट छिद जाते हैं
फूलों को सब चुन लेते हैं
लगा हृदय से करते प्यार
काँटों का कुछ मान न होता
सब देते उनको दुत्कार।

सोहनलाल द्विवेदी के बालगीतों में शिशु मन की सहज प्रवृत्तियाँ उसी प्रकार स्वतः पल्लवित और पुष्पित हो जाती है, जिस प्रकार खिलती हैं जंगल में फूल पत्तियाँ। प्रकृति और परिवेश के अनुरूप शब्द अपने तारतम्य के साथ स्वतः दौड़ते चले आते हैं। सार्थक ध्वनियाँ गत्यात्मकता उत्पन्न कर देती हैं—

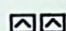
"फूल फूलकर
झूल झूलकर
भौंरे गाते हैं गाना।
डाल-डाल पर
पात-पात पर,
कोयल का स्वर मस्ताना।"
(तितली रानी)

इनके गीतों की सबसे बड़ी विशेषता भाषा सारल्य है। वे बाल मनोविज्ञान के सच्चे ज्ञाता हैं। बाल मन में उतरकर उसी के अनुकूल बाल सुलभ रचना करते हैं—

...मिल जाते हैं खेल खिलौना,
खेल खिलौना सपने में।
बिछ जाती है खटिया मेरी,
और बिछौना सपने में।
नानी बैठ कहानी कहती,
हम सुनते हैं सपनों में।
(गीत भारती)

अस्तु पं. सोहनलाल द्विवेदी ने हिन्दी बाल साहित्य की अभिवृद्धि में जो योगदान किया है, वह अभूतपूर्व और अप्रतिम ही है। शिशुओं और किशारों में

राष्ट्रीय प्रेम की भावना भरने के लिए वे आयुपर्यन्त वालोपयोगी काव्य की रचना करते रहे। बालकों में सद्विचार और चारित्रिक संस्कार उत्पन्न करने की दृष्टि से उन्होंने अनेक बालोपयोगी गीत लिखे। उनके अधिकांश गीतों में खेल-खेल और 'हँसी-हँसी' में बालपन में प्रेरक शिक्षा देने की विलक्षण क्षमता विद्यमान है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उनके काव्य भंडार की अधिकांश शब्द-मणियाँ शिशुओं, बालकों और किशोरों के प्रति समर्पित है।



5

राष्ट्रीय चेतना के गायक

कविवर सोहनलाल द्विवेदी राष्ट्रीय चेतना के कवि थे। उनके जीवन और कृतित्व में सर्वत्र यही चेतना मुखरित हुई है। स्वातंत्र्य आंदोलन के नायक, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी से प्रेरित उनकी यशस्वी रचनाएँ हिन्दी साहित्य की अमोल निधि हैं। सोहनलाल द्विवेदी में बाल्य काल से ही राष्ट्रीय भावना कूट-कूटकर भरी थी। महात्मा गाँधी के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा थी। उनकी प्रथम रचना *भैरवी* (1941) का केन्द्र विन्दु गाँधी ही हैं। उनके काव्य के समूचे भावचक्र की धुरी है–'राष्ट्रधर्म'। अपने बाल्य काल से अंतिम क्षणों तक उन्होंने इसी राष्ट्रधर्म का पालन बड़ी आस्था तन्मयता और निष्ठा के साथ किया था। इसी से राष्ट्रकवि के रूप में उनकी पहचान हुई।

यहाँ हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य के प्ररिप्रेक्ष्य में द्विवेदी जी के स्थान पर एक दृष्टि डालना भी अप्रासंगिक न होगा। देखा जाए तो हिन्दी में राष्ट्रीय भावना के स्वर वीर गाथा काल के कवियों से ही सुनाई पड़ने लगते हैं। *पृथ्वीराज रासो, हम्मीर रासो* और *वीसल देव रासो* में वीर रस की कविताएँ विद्यमान है। यह वह समय था जब देश पर विदेशी आक्रांता निरंतर आक्रमण कर रहे थे। रीतिकाल में भूषण की कविता भी एक प्रकार से राष्ट्रीय जागरण की कविता है, किन्तु वह हिन्दुत्व की भावना से अधिक प्रेरित है।

नवजागरण काल

आधुनिक राष्ट्रीयता के स्वर हमें अंग्रेज़ी राज की स्थापना के साथ ही सुनाई पड़ते हैं। 1857 ई. के विद्रोह, जिसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नाम से जाना जाता है, भारत में अंग्रेज़ी शासन के विरुद्ध भारत की उग्र राष्ट्र भावना का प्रथम आह्वान था और तभी से हमारी राष्ट्रीयता का जयनाद आरंभ हो गया। अब पहली बार स्थानीय राज्य अथवा धर्म-संप्रदाय के संकीर्ण दायरे से निकलकर राष्ट्रीयता ने व्यापक रूप से देश को अंतर्भूत कर लिया। यह आंदोलन तो विफल हो चुका था, परंतु वह अपने पीछे एक राष्ट्रीय चेतना छोड़ गया था, जिसका प्रभाव उस युग के विचारवान मनीपियों ओर सामान्य जन पर पड़ रहा था। अंग्रेज़ों द्वारा किए गए दमन और अत्याचार की दास्तानें अभी स्मृतियों में शेष थी। जनता शांत थी, किन्तु अंदर

से विदेशी दासता से मुक्त होने के लिए आतुर भी थी। आत्म सम्मान के लिए ऐसी दासता बड़ी घातक थी। प्रत्येक मनस्वी भारतीय को इसकी आंतरिक ग्लानि थी, चाहे इस ग्लानि को अभिव्यक्त करने का साहस अथवा आत्मबल उसमें रहा हो या न रहा हो। इस क्षति की पूर्ति के लिए वह अपने प्राचीन गौरव का आह्वान करता था। इस प्रकार समस्त देश में पुनरुत्थान का एक आंदोलन आरंभ हो गया था। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद प्रभृति लोकनायक इसका नेतृत्व कर रहे थे। ऋषि दयानंद ने तो स्पष्ट घोषणा की थी कि विदेशी राज कितना भी अच्छा क्यों न हो, स्वदेशी शासन से श्रेष्ठ नहीं हो सकता।

विदेशी शासन के विरुद्ध आह्वान के स्वर कवियों और लेखकों की लेखनियों के माध्यम से भी अभिव्यक्ति पाने लगे। हिन्दी में भी नवजागरण की लहर का उत्पन्न होना स्वाभाविक था। अंग्रेज़ी साम्राज्य के प्रतिरोध के स्वर भारतेन्दु की *भारत दुर्दशा* रचना के रूप में पहली बार उभरे।

आर्थिक शोषण पर आक्रोश व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा—

अंग्रेज़ राज सुख साज सब सज भारी
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में जिस राष्ट्रीय आंदोलन का प्रारंभ हुआ वह उत्तरोत्तर संघटित होता चला गया। वीसवीं सदी के प्रारंभ में महावीर प्रसाद द्विवेदी युग के दो प्रमुख कवि मैथिली शरण गुप्त और अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' हैं। इन दोनों कवियों की राष्ट्रीय भावना आदर्शवादी है, जो सुधार की प्रवृत्ति से ओत-प्रोत है। राम और कृष्ण के पुरातन कथानक रूप में एक आदर्श नेता की कल्पना है। मैथिलीशरण गुप्त की *भारत भारती* में राष्ट्रीय भावनाओं का अत्यंत स्पष्ट रूप निखरकर सामने आया। *जग जाएँ तेरी नोक से सोए हुए हों भाव जो* में राष्ट्रीय जागरण का ही आह्वान है। उन्हें ही पहली बार 'राष्ट्रकवि' कहा गया। माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामधारी सिंह 'दिनकर', सुभद्रा कुमारी चौहान प्रभृति कवियों के काव्य में राष्ट्रीयता प्रमुख रूप से उभरकर सामने आती है, किन्तु गाँधी जी के आदर्शों से प्रेरित होकर जो काव्य-रचना पं. सोहनलाल द्विवेदी ने की और स्वतंत्रता आंदोलन को राष्ट्रप्रेम के अपने गीतों से जन-जन तक पहुँचाने में जो लोकप्रियता उन्होंने प्राप्त की, निश्चय ही उसी ने उन्हें जनसामान्य में राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठित किया।

कविवर हरिवंश राय बच्चन के शब्दों में, "जहाँ तक मेरी स्मृति है जिस कवि को राष्ट्रकवि के नाम से सर्वप्रथम अभिहित किया गया, वे सोहनलाल द्विवेदी थे। बाद में प्रचार युग उन्हें पीछे छोड़कर दूसरे-दूसरे राष्ट्रकवि खड़े करता रहा। फिर भी, हिन्दी में राष्ट्रीय धारा की कविता की चर्चा जब होगी तो उन्हें सर्व प्रथम याद किया जाएगा।"

सोहनलाल द्विवेदी जी के काव्य में सर्वत्र राष्ट्र और राष्ट्रीयता के दर्शन होते हैं। यद्यपि उन्होंने बाल साहित्य और ललित साहित्य की भी रचना की थी, किन्तु इन सबमें भी जो केन्द्रीय स्वर है, वह है राष्ट्र और राष्ट्र की अस्मिता का, राष्ट्र के वैभव का और राष्ट्र की स्वतंत्रता के संघर्ष का। द्विवेदी जी ने अपनी काव्य-रचना का शुभारंभ स्वातंत्र्य आंदोलन के उस दौर में किया था, जब गाँधी जी राष्ट्रनायक के रूप में विदेशी सत्ता से मुक्ति के लिए देशव्यापी आंदोलन का नेतृत्व कर रहे थे। द्विवेदी जी बाल्यकाल से ही गाँधी जी और उनके द्वारा संचालित देश-सेवा के विविध आंदोलनों से पूर्णतः प्रभावित थे। 1930 के नमक सत्याग्रह के समय भी उन्होंने अपने नगर बिन्दुकी के पास अपने सहपाठियों के साथ नमक बनाने की योजना तैयार की थी। 1930 में ही उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में महात्मा गाँधी के स्वागत में प्रसिद्ध 'खादी गीत' प्रस्तुत किया था। यह गीत इतना लोक प्रिय हुआ कि गाँधी आश्रम, मेरठ ने इसकी हज़ारों की संख्या में प्रतियाँ प्रकाशित कीं और गाँधी जी के चित्र के साथ वितरित की। वे गाँधी जी को अपनी प्रेरक विभूति मानते थे। 1944 में गाँधी जी के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए उन्होंने एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण ग्रंथ *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ* का संपादन किया, जो उनकी एक चरम उपलब्धि ही थी। इसकी भूमिका विश्वख्याति के दार्शनिक, सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने लिखी थी। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन ने इसके प्रकाशन पर पं. सोहनलाल द्विवेदी की कवि कल्पना का स्वागत करते हुए इसे हिन्दी साहित्य की मूल्यवान संपत्ति बताया था।

भैरवी (1941 से *संजीवनी* (1983) तक उनकी प्रायः सभी काव्य-रचनाओं में राष्ट्रीय भावना के स्वर यत्र-तत्र सर्वत्र सुनाई पड़ते है। उनकी कृतियों में अनवरत संघर्ष और लक्ष्य के लिए मर मिटने की अटूट और अदम्य आकांक्षा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। अपने समय में द्विवेदी जी की रचनाएँ राष्ट्रीय जागरण का पर्याय-सा बन गई थीं। उस काल में शायद ही कोई ऐसा कवि सम्मेलन होता हो, जिसमें कविवर द्विवेदी जाएँ और वहाँ *भैरवी* की गूँज न सुनाई पड़े। श्री क्षेमचंद्र सुमन के शब्दों में, "श्री सोहनलाल द्विवेदी हिन्दी के उन कवियों में हैं, जिन्होंने राष्ट्रीय जागरण में अपनी लेखनी और प्रतिभा दोनों को सर्वात्मना लगाया है। जब भी कभी हिन्दी साहित्य की गाँधीवादी विचारधारा का मूल्यांकन किया जाएगा, तब उनकी रचनाएँ अपनी विशिष्टता के लिए 'कनिष्टिकाधिष्ठित' रहेंगी।"

पं. सोहनलाल द्विवेदी युगधर्म को पहचाननेवाले ऐसे समय में सशक्त और जीवंत कवि के रूप में सामने आए, जब विदेशी शासकों के अत्याचारों और कठोर दमन चक्र के नीचे भारतीय जनता पिस रही थी। शासन के विरुद्ध एक भी शब्द कहना फांसी की सज़ा के लिए पर्याप्त होता था। आत्माभिव्यक्ति को कोई स्थान नहीं था। उस समय सोहनलाल द्विवेदी जैसे राष्ट्रीय कवियों ने जिस साहस और

निर्भीकता के साथ भारत-दुर्दशा का चित्रण कर विदेशी दासता के प्रतिरोध में जिस चेतना और जागृति के लिए उद्बोधन के गीत गाए, साहस शौर्य और स्वाभिमान का संचार कर देश के कोटि-कोटि नर-नारियों का आह्वान किया, वह निश्चय ही वंदनीय और श्लाघनीय है। जब तक देश पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त नहीं हुआ, द्विवेदी जी की वाणी को जैसे विश्राम नहीं मिला। वह 'युध्यस्व विगत-ज्वर' का अनवरत घोष करती ही रही। उनकी वाणी युगवाणी के रूप में सुनाई पड़ी। उनकी *भैरवी, युगाधार, प्रभाती,* और *पूजागीत* में उस युग की चेतना प्रस्फुटित होती है, जिसमें कवि की राष्ट्रीय भावना बड़ी ही ओजस्वी और साहसी स्वरों में गूँजती सुनाई देती है। स्वतंत्रता रूपी महान यज्ञ की सफलता के लिए उन्होंने अपनी काव्य-रचनाओं के माध्यम से जनजागरण और जन क्रांति का बड़ा ही सशक्त आह्वान किया।

वे देशवासियों को परतंत्रता से मुक्त होने के लिए देश के सभी क्षेत्रों, वर्गों और धर्मावलंबियों का आह्वान करते हैं। उन्हें बारंबार देश की बलिवेदी पर अपनी जीवनाहुति चढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं और उनमें जागरण का महाशंख फूँकते हैं—

जागो हे पांचालनिवासी!
जागो हे गुर्जर मद्रासी।
जागो हिन्दू मुग़ल मराठे
जागो मेरे भारतवासी
जननी की ज़ंजीर बजती
जगा रहे कड़ियों के छाले
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी
जागो मेरे सोनेवाले।

× × ×

कुरु क्षेत्र में गूंज रहा है, भैरव शंख निनाद
जागो, जागो आज पांडवों के रण के उन्माद
मेरे हिन्दुस्तान! जागो हुआ विहान।

निःसंदेह द्विवेदी जी की ओजस्वी कविताओं ने नवयुवकों में एक नई स्फूर्ति और ऊर्जा का संचार किया। जन जागरण के उस वातावरण को बनाए रखा, जो विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए आवश्यक था। वंदिनी भारतमाता की मुक्ति और उसके लिए लोक-जागरण और लोक क्रांति को जन्म देना द्विवेदी जी की राष्ट्रीय भावना का सबल पक्ष है, जो हिन्दी के राष्ट्रीय साहित्य की अमूल्य धरोहर है। कहना न होगा, कि हिन्दी समीक्षकों की दृष्टि से, श्री द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी के शब्दों

में, श्री सोहनलाल द्विवेदी अभी तक धूल के फूल की तरह दूर ही पड़े हुए हैं। नई पीढ़ी में राष्ट्रीयता की भावना को सतत रूप से बलवती बनाए रखने के लिए इनकी रचनाओं का समुचित मूल्यांकन होना चाहिए।

श्री सोहनलाल द्विवेदी जी ने अपनी राष्ट्रीय कविताओं में स्वतंत्रता आंदोलन के कर्णधार युगावतार, गाँधी जी की समग्र भावना से वंदना की है। गाँधी को महामानव का स्थान देकर उन्होंने अपनी अनेक रचनाओं में गाँधी के आदर्शों और सिद्धांतों को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया है। खादी, अहिंसा और सत्याग्रह उनके रोम-रोम को पुलकित करती दीख पड़ती है, जो उनकी कविता के स्वरों में यत्र-तत्र फूट पड़ती है। खादी का वह अमर गीत उनके काव्य को जन-जन तक पहुँचाने में सफल रहा। गाँधी जी की लोकप्रियता, महानता और उनके अनुयायियों की देशव्यापी अपार जनसंख्या का दिग्दर्शन करानेवाला, वह गीत हिन्दी ही नहीं भारतीय साहित्य की एक अप्रतिम उपलब्धि है। गाँधी कोई तानाशाह नहीं थे, लोकप्रिय जन नेता थे, जिनके एक संकेत पर करोड़ों का जन समुदाय उठा खड़ा होता था। जिस ओर उनकी दृष्टि पड़ती थी, करोड़ो आँखें उसी ओर देखने लगती थी, गाँधी जी के इन अथाह अनुगामियों का द्विवेदी जी ने कितने सुंदर ढंग से वर्णन किया है। देखिए—

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि,
पड़ गए कोटि दृग उसी ओर।

गाँधी जी, द्विवेदी जी की अनेक रचनाओं के मेरुदंड है। *युगाधार* में बापू के अलौकिक कृतित्व और व्यक्तित्व की एक प्रेरक झाँकी देखिए—

चल पड़ा कौन मर मिटने?
लेकर कुछ वीरों की टोली,
सुलगा दी मग-मग, पग-पग में
किसने आज़ादी की होली?

× × ×

हैं मुट्ठी भर हड्डियाँ,
भले ही कह लो तुम इनको शरीर
संसार कँपाता चलता है
वह भारत का नंगा फ़क़ीर।
हे कोटि चरण, हे कोटि बाहु!
हे कोटि रूप, हे कोटि नाम

तुम ऐ मूर्ति, प्रति मूर्ति कोटि,
हे कोटि मूर्ति तुमको प्रणाम।

द्विवेदी जी बापू को अपने युग की और राष्ट्र की संपूर्ण चेतना का पर्याय मानते थे। वे युगात्मा गाँधी के सच्चे उपासक थे। भारत के कोटिशः नर-नारी ही गाँधी के प्रति एक उद्धारक के रूप में आस्थावान नहीं थे, एक युग अपेक्षा की दृष्टि से उनकी ओर देख रहा था। स्वतंत्रता उस युग की आकांक्षा थी। भारत के स्वतंत्रता संग्राम की ओर अनेक परतंत्र देशों की दृष्टि थी। इसीलिए तो द्विवेदी जी ने गाँधी जी को 'युग पुरुष' की संज्ञा दी—

युग बढ़ा तुम्हारी हँसी देख
युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख।
तुम अचल मेखला बन भू की
खींचते काल पर अमिट रेख
× × ×
तुम वोल उठे युग बोल उठा
तुम मौन बने युग मौन बना।
कुछ कर्म तुम्हारे संचित कर,
युग कर्म जगा युग धर्म बना।

गाँधी जी के संबंध में द्विवेदी जी ने लिखा है, "इस श्रद्धा की ज्योति ने मेरे अँधेरे पथ में सदैव प्रकाश फैलाया और निरंतर मेरे उत्साह को जागरूक रखा है।" कहना न होगा कि महात्मा गाँधी को नायक मानकर अन्य किसी कवि ने इतनी काव्य-कृतियाँ नहीं रची, जितनी कि पं. सोहनलाल द्विवेदी ने रची। उन्होंने राष्ट्र मुक्ति का सूत्रधार मानकर उनमें बोधिसत्त्व का पुनर्दर्शन किया। *चेतना* काव्य कृति में उनके ये उद्‌गार देखिए—

धन्य धरा यह आज कि जिसमें
तुमने जन्म लिया, है।
धन्य जाति यह आज कि
जिसको तुमने मुक्त किया है
तुम्हें देखकर किया विश्व ने
बोधिसत्त्व का दर्शन।

पं. सोहनलाल द्विवेदी ने कहा था, "साहित्यकार की स्याही शहीद के लहू से भी अधिक पवित्र होती है। साहित्यकार को जीतेजी अपनी हड्डियों और रक्त का दान देना पड़ता है। अपने अस्तित्व को गला घुलाकर स्वयं साहित्य बनना पड़ता है।" उनका यह कथन अवश्य ही उनकी साहित्य साधना का निकष कहा जा सकता है।"

माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामधारी सिंह दिनकर, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत, प्रभृति कवियों ने अपने राष्ट्रगीतों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। बंदिनी भारतमाता को मुक्त कराने के लिए जहाँ माखनलाल चतुर्वेदी बलि होने की परवाह नहीं करते–

बलि होने की परवाह नहीं
मैं हूँ कष्टों का राज्य रहे।
मैं जीता-जीता-जीता हूँ,
माता के हाथ स्वराज्य रहे।

वहीं, सुभद्रा कुमारी चौहान भी भारतमाता पर हो रहे अत्याचारों से क्षुब्ध हो मरने के लिए उद्यत हैं–

सुनूँगी माता की आवाज़
रहूँगी मरने को तैयार।
कभी भी उस वेदी पर देव
न होने दूँगी अत्याचार।

सोहनलाल द्विवेदी जी तो स्पष्ट घोषणा करते हैं–

आँसू बिखराते बीतेगी
जलती जीवन की घड़ियाँ
बिन चढ़ाए शीश नहीं
टूटेंगी माँ की कड़ियाँ

द्विवेदी जी को अपनी मातृभूमि से गहरा लगाव है। वह भी जननी और जन्मभूमि को स्वर्ग से भी महान मानते हैं। किन्तु मातृभूमि तो बंदिनी है, उसकी वेदना का किन शब्दों में बखान हो–

बंदिनी तव वंदना में
कौन-सा मैं गीत गाऊँ?
कोटि कंठों में तुम्हारी
वेदना कैसे बजाऊँ?

पूजागीत में वह भारत माँ का आह्वान करते हैं–

तुम उठो माँ पा नवल बल
दीप्त हो फिर भाल उज्ज्वल।

मातृभूमि वंदना, स्वदेश स्तवन का ही एक रूप है राष्ट्रध्वज का स्तवन। प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्र का प्रतीक एक राष्ट्रध्वज होता है। राष्ट्र के भौगोलिक सामाजिक

और सांस्कृतिक ऐक्य का वह मूर्तमान रूप है। कविवर द्विवेदी जी *चेतना* में राष्ट्रीय तिरंगे को फहराते हुए उसकी आन-बान और शान का अनुभव करते हुए कहते हैं—

लहरे तिरंग ध्वज अपना
जिसने सत्य बना दिखलाया
आज़ादी का सपना।

वस्तुतः राष्ट्र ध्वजा हममें बलिदान की प्रेरणा ही नहीं जगाती, वह स्वतंत्रता के लिए बलिदान होने शहीदों की स्मृति भी जगाती है। राष्ट्रसेवी होने के नाते हमें अपने कर्तव्यों का भी स्मरण कराती है। उनके एक प्रयाण गीत की ये पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

हम बढ़ें उधर कि जिधर राष्ट्र की पुकार हो,
हम बढ़ें उधर कि जिधर राष्ट्र का सुधार हो।
हम बढ़ें उधर कि जिधर राष्ट्र पर विचार हो,
हम बढ़ें उधर कि जिधर राष्ट्र पर प्रहार हो।
कोटि-कोटि शीश उठे बन अभेद्य त्राण हो,
राष्ट्र ध्वजा राष्ट्र का अमर विजय निशान हो।

द्विवेदी जी की मान्यता है कि कवि देश को आज़ादी के ही गीत न दे, किन्तु वे रचनाएँ भी दे, जो उसके समाज, जाति, राष्ट्र के मेरुदंड आदर्श को सीधा रख सकें। *वासवदत्ता* में संकलित ऐतिहासिक प्रसंगों का यही उद्देश्य है। उन्हें पढ़ने पर हमारी वासना नीचे दबती है और आत्मा ऊपर उठती है। उर्वशी, कर्ण-कुंती, कुणाल, सुजाता, भिक्षा-प्राप्ति और सरदार चूड़ावत आदि के प्रसंग इसी प्रकार की उदात्त भावनाएँ प्रदान करते हैं। कवि के प्रबंध काव्यों में इन्हीं चरित्रों के माध्यम से राष्ट्रोचित भावनाओं को जाग्रत करने का प्रयास किया गया है। मातृभूमि के चरणों में हँस-हँसकर बलिदान होने की प्रेरणा के स्रोतों का उद्गम इनकी ये देशभक्ति की रचनाएँ ही हैं। *भैरवी* में कवि माँ को संबोधित करके कहता है—

गाओ माँ, फिर एक बार तुम
वे मरने के मीठे गान
हम मतवाले हों स्वदेश के
चरणों में हँस-हँस बलिदान।

कुणाल में कवि पराधीनता के अभिशापों की गणना कराते हुए उनसे मुक्त होने की प्रेरणा देता है। कुणाल की कथा तो एक माध्यम है, जिसके द्वारा वह दासता से मुक्ति पाने के लिए नवयुवकों का आह्वान कर रहा है—

पराधीनते! सर्वनाश हो तेरा जग में
कुछ न सोचने देती तू मानव के मग में।

दास वृत्ति से श्रेष्ठ बहुत है भूखों मरना,
परवश होकर किन्तु नहीं वैतरणी तरना।

देश के ऊपर मर मिटनेवाले शहीदों के प्रति उन्होंने जो सम्मान प्रदर्शित किया था, वह उनके काव्य को सम्मान के उच्च शिखर तक ले जाने और जन-प्रिय बनाने में असंदिग्ध रूप से सहायक रहा। प्रसिद्ध क्रांतिकारी यतीन्द्र दास भूख हड़ताल करके 1929-30 में शहीद हो गए। सारे देश में विदेशी सरकार के विरुद्ध आक्रोश की तीव्र लहर दौड़ गई। काशी में शहीद के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आयोजित शोक सभा में कवि द्विवेदी का आक्रोश इन शब्दों में अभिव्यक्त हुआ–

"आँसू बिखराते बीतेगी जलती जीवन घड़ियाँ,
बिना चढ़ाए शीश नहीं टूटेंगी मां की कड़ियाँ।
दुनियाँ में जीने का सबसे सुंदर मधुर तक़ाज़ा
ऐ शहीद। उठने दे अपना फूलों भरा जनाजा!"

इसी भाव को आगे चलकर *प्रभाती* में स्वर देते हुए वे शहीदो के प्रति नतमस्तक हो कहते हैं–

जो फाँसी के तख्तों पर जाते हैं झूम
जो हँसते-हँसते शूली को लेते चूम
दीवारों में चुन जाते हैं जो मासूम
टेक न तजते पी जाते हैं विष का घूम।

सेवाग्राम में वे उन वीर बलिदानियों को प्रणाम करते हैं, जिन्होंने ज़ंजीरों से जकड़े जाने पर भी जननी जन्मभूमि की जय-जयकार का स्वर गुँजाया, लाठी गोली खाकर भी आज़ादी की टेक नहीं छोड़ी–

ज़ंजीरों में कसे हुए सिंकचों के पार,
जन्मभूमि जननी का करते जय-जयकार।
सही कठिन हथकड़ियों की बेंतों की मार
आज़ादी की कभी न छोड़ी टेक पुकार।
उन्हें प्रणाम।
कोटि प्रणाम।

राष्ट्रकवि द्विवेदी जी ने बापू ही नहीं राष्ट्र के सभी अग्रणी जन नेताओं और स्वतंत्रता सेनानियों के प्रति आस्था के स्वर संजोए हैं। नेताजी सुभाषचंद्र बोस के प्रति सेवाग्राम में उनके उद्‌गार हैं–

चमको राष्ट्र गगन मंडल में
चूमे चरण सिन्धु तेरे

मेरे वीर सुभाषचंद्र
सौभाग्य चंद्र बन जा मेरे।

लौह पुरुष सरदार पटेल, महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी, पं. जवाहर लाल नेहरू, राजर्षि टंडन जी, लालबहादुर शास्त्री, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, संत विनोबा भावे और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर प्रभृति राष्ट्रनेताओं के प्रति द्विवेदी जी ने अपनी श्रद्धा के सुमन उंडेले हैं। सरदार पटेल की प्रशस्ति में वे कहते हैं कि ऐसे महापुरुष किसी देश में शताब्दियों बाद ही जन्म लेते हैं—

लौह पुरुष सरदार! करूँ बन्दन
तेरा किन शब्दों में,
राष्ट्रपुरुष तुझसे मिलते हैं
किसी राष्ट्र को अब्दों में
तेरा गर्जन एक कि
निर्वल में नवीन बल आता है
तेरा वर्जन एक कि
बैरी बढ़ पीछे मुड़ जाता है।

संत विनोबा भावे को कवि ने बीसवीं सदी का वामन अवतार मानकर उनकी वंदना भी राष्ट्रपुरुष के रूप में की है—

पाप पुण्य सब क्षार हो गया,
फिर पावन संसार हो गया
बलि से भूमि दान पाने को
ज्यों वामन अवतार हो गया।

द्विवेदी जी ने सामाजिक अन्याय और आर्थिक विषमता को भी राष्ट्र उत्थान के मार्ग की समस्या मानते हुए इनके निराकरण पर अपनी लेखनी उठाई है। कृषक और मज़दूर ही भारतीय अर्थ व्यवथा के मुख्य स्तंभ हैं, किन्तु उनकी स्थिति दयनीय ही है। ये गगन चुंबी प्रासाद, भवन जिन श्रमिकों और किसानों की मेहनत पर खड़े हैं, वे निर्धन और असहाय हैं। *भैरवी* में लिखते हैं—

जिनके अस्थि पंजरों की
नीवों पर प्रासाद खड़े,
जिनके उषा रक्त के गारे से
गढ़ डाले भवन बड़े
जिनकी भूखों की होली पर
मना रहे तुम दीवाली

इसी भाव को लेकर किसान पर लिखी गई उनकी प्रसिद्ध कविता की ये पंक्तियाँ देखिए—

नभ-चुंबी प्रासाद भवन
जिनमें मंडित मोहक कंचन
वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान।
वह तेरी ताक़त पर किसान!

एक स्थान पर वह कृषकों में जागृति का मंत्र फूँकते हुए उन्हें महाक्रांति का राग सुनाते दीख पड़ते हैं—

तू मतवालों से भाग-भाग
सोए किसान उठ जाग-जाग।
निष्ठुर शासन में लगा आग
गा महा क्रांति का अभय राग।

अपने अंतिम दिनों में उन्होंने समाज की इस विषम व्यवस्था से खिन्न होकर कहा था—

जन-जन को दे सके न अब तक
नन्हा एक निवास रे
झोंपड़ियाँ रो रही आज भी
हँसते हैं रनिवास रे
यह कैसा समाज जिसमें है
दोनों का उपहास रे,
जो मेहनत करते, पाते
भरपेट न मुँह का ग्रास रे,
ओ भारत के भाग्य विधाता
बदलो यह इतिहास रे।

द्विवेदी जी धार्मिक संकीर्णता और सांप्रदायिक भेदभाव से कोसों दूर थे। हिन्दू-मुस्लिम विवाद को वे राष्ट्रीय एकता में बाधक मानते थे। वे मानवमात्र में एकता और सौहार्द के पक्षधर थे। इसीलिए उन्होंने बड़े ओजस्वी स्वर में जाति, संप्रदाय और धर्म के भेदभाव को तोड़ देने का आह्वान किया—

तोड़ दो मन में कसी सब शृंखलाएँ
तोड़ दो मन में बसी सब संकीर्णताएँ

बिन्दु बनकर मैं तुम्हें ढलने न दूँगा
सिन्धु बन तुमको उठाने आ रहा हूँ। –मुक्ति गंधा से...

कोई भी धर्म अनर्थ नहीं करता, फिर मस्जिद और मंदिर क्यों लड़ रहे हैं–

मस्जिद से मंदिर लड़ते हैं
गिरजा से लड़ते विहार मठ।
धर्म अनर्थ नहीं करता है
करते हैं अधर्म पामर शठ।
वर्ण-वर्ण में छिड़ा द्वंद्व है
जाति-जाति से जूझ रही है
स्वार्थ किए हैं व्यर्थ सभी को
सुमति, सुगति कब सूझ रही है।

निःसंदेह कविवर द्विवेदी जी गाँधी जी के परम भक्त थे। सत्य, अहिंसा, करुणा में उनकी पूर्ण आस्था थी, किन्तु राष्ट्र किसी की दया पर जीवित नहीं रह सकता, उसे सुरक्षा के मामलों में आत्म-निर्भर बनना होगा। नव-निर्माण तो आवश्यक है ही, किन्तु इसकी रक्षा उससे भी अधिक आवश्यक है। राष्ट्र की बल शक्ति ही उसे विश्व के देशों में सम्मान के साथ खड़ा रहने में सहायक होती है। कवि ने परमाणु बम के आक्रमण से राष्ट्र को चेतावनी देते हुए इस दिशा में कार्य करने का संकेत भी दिया–

नव निर्माण के निर्माता, सर्जन में ही रहो न तत्पर
कब विध्वंसों के एटम बम आ गिरें अचानक ही सिर पर।

कवि ने यथार्थ सत्य को प्रकट करते हुए चेताया कि शक्ति के बिना सत्ता का सिंहासन नहीं टिक पाता। करुणा से मठ विहार बनाए जा सकते हैं, किन्तु राष्ट्र नहीं। कवि ने इतिहास की याद दिलाते हुए कहा–

तलवारों की ही धारों से सिंहासन चमका करता है
तलवारों की मनुहारों से सिंहासन दमका करता है
करुणा से बनते मठ विहार, करुणा ही अपनी बनी हार
इससे कहता हूँ बार-बार, करुणा ही अपनी बनी हार।

यहाँ द्विवेदी जी भी राष्ट्रकवि दिनकर के स्वर में स्वर मिलाकर दया और करुणा पर निर्भर न रहकर शक्ति और शस्त्र के बल पर राष्ट को सबल और स्वाभिमानी देखना चाहते हैं। दिनकर ने भारत के उत्तुंग भाल हिमालय के माध्यम से कहा था–

रे रोक युद्धिष्ठर को न यहाँ
जाने दे उसको धीर वीर

लौटा दे हमें गांडीव गदा
लौटा दे अर्जुन भीम वीर।

शक्ति का यही संदेश कविवर द्विवेदी भी देश के युवकों, वीरों और कर्णधारों को देना चाहते हैं। वह देश को आक्रांताओं से सचेत रखना चाहते हैं। वह शासन के सूत्रधारों को 'जागते रहो' कहकर सावधान कर रहे हैं कि कहीं शत्रु तुम्हारी बेख़बरी का लाभ उठाकर आक्रमण न कर बैठे। इतिहास साक्षी है कि–

जब जब भी तुम बेख़बर हुए, जब जब दी तुमने दयादान
तब तब तुम नीचे हुए, शत्रु आ बैठा छाती पर अजान।
हिमगिरि की चोटी से पुकार, इससे कहता हूँ बार-बार
प्रति रक्षा के मेरे प्रहरी। जागते रहो हो हो ख़बरदार।

× × ×

पिछला इतिहास न बन जाए अपना अगला इतिहास आज
रह जाए न बनकर महज स्वप्न यह स्वतंत्रता, यह सब स्वराज।
तुम कहीं छलावा में आकर, फिर बनो न वैरी के शिकार
इससे कहता हूँ बार-बार, हो ख़बरदार हो होशियार।

अपनी सेनाओं को सशक्त और सतर्क रहने का आह्वान करते हुए कवि कहता है–

जो टकराए हो चूर्ण-चूर्ण, हो यों अपनी सेना तैयार
इतिहास कह रहा है पुकार, जागते रहो हो होशियार।

राष्ट्रभक्त कवि केवल अतीत के वैभव और इतिहास की सीख तथा वर्तमान के यथार्थ में ही जीना नहीं चाहता, वह राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के लिए ऐसे युवक चाहता है, जो सेवाव्रती हों और भारत माँ के चरणों पर शीश चढ़ाने के लिए उद्यत हों–

जो शिर सुमन चढ़ा सकते हों, हर्षित हो माँ के चरणों पर
हमको ऐसे युवक चाहिए, सकें देश का जो संकट हर।

कविवर द्विवेदी जी ने जिस निर्भीकता और राष्ट्र प्रेम से अपने काव्य जीवन का शुभारंभ किया था, वे आजीवन दृढ़ता से उसी पर अडिग रहे। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जब शासन पर अधिकार जमाए बैठे जन-प्रतिनिधि जनता की आकांक्षाएँ पूरी करने में समर्थ नहीं दिखाई दिए, निर्धनता, सामाजिक विषमता, न्याय में देरी, पक्षपात, भ्रष्टाचार और राष्ट्र के चतुर्दिक अधःपतन और समाज की विघटनकारी प्रवृत्तियों को देखकर कवि को घुटन होने लगी। जब उन्हें लगा कि स्वतंत्रता के बाद भी राष्ट्र की दिन प्रति दिन बढ़ती हुई सुरसा-मुखी समस्याओं का दोष वर्तमान नेतृत्व पर है, तो उन्होंने युग कवि के रूप में यह उद्घोष करने में ज़रा भी हिचकिचाहट का अनुभव नहीं किया–

मुझे भरोसा रहा नहीं
अब दिल्ली के दरबार का।

उन्होंने निःसंकोच और निर्भीकता से शासन-व्यवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए कर्णधारों को संबोधित कर चेतावनी भरे स्वर में कहा—

ऐ लाल किले पर झंडा फहराने वालो
सच कहना कितने साथी साथ तुम्हारे हैं?
क्या आज खुशी की लहर देश में है,
उठ रहे खुशी के सचमुच ऊँचे नारे हैं?
कब तक ऐसे झूठे त्योहार मनाओगे?
कब तक ऐसे झूठे शृंगार सजाओगे

× × ×

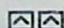
ये झूठी खुशियाँ और मनाओं आज नहीं
दिन आज खुशी का नहीं, दुःखी दिलवालों का
पीछे झंडा फहराना, ऐ झंडे वालो
पहले जवाब दो मेरे चंद सवालों का।

इस कविता के प्रकाशित होने पर पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी ने लिखा था, "देश के कर्णधारों को गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए कि आखिर क्या बात है, जिससे देश के प्रमुख गाँधीवादी कवि को यह लिखने के लिए बाध्य होना पड़ा।"

इस प्रकार हम देखते है कि पं. सोहनलाल द्विवेदी की वाणी में जनसामान्य की आशा-आकांक्षा और निराशा-आक्रोश आदि के भाव मूर्त्त हुए हैं, फिर भी उनकी रचना व्यक्तिगत कुंठा और संत्रास से मुक्त है। वे सत्तासीन देश के कर्णधारों को परामर्श देते हैं—

व्यथा दूर हो सभी देश की, इतना अगर कर पाओ
सिंहासन का मोह छोड़कर, जनता के साथी बन जाओ।

पं. सोहनलाल द्विवेदी के सम्मुख एक ही आदर्श था वह राष्ट्र और उसकी अस्मिता की रक्षा। उनकी सभी कृतियों में राष्ट्रीयता की झलक सहज ही दृष्टिगोचर होती है। उनके बाल गीतों का सार तत्त्व भी बच्चों में राष्ट्रीय स्वर से परिपूर्ण है। डॉ. कुमुद शर्मा उनके काव्य में विद्यमान राष्ट्रीय चेतना को रेखांकित करते हुए ठीक ही कहती हैं, "जब-जब राष्ट्रीय काव्य की चर्चा की जाएगी, तब-तब राष्ट्रीयता के सशक्त स्वरों की गूँज उदात्त जीवन दृष्टि, गहन संवेदना, प्रौढ़ विचारों से समन्वित द्विवेदी जी का साहित्य हमेशा याद किया जाएगा।"



6

काव्य-शिल्प

पं. सोहनलाल द्विवेदी अभिव्यंजना शिल्प पर आधिक ज़ोर नहीं देते। उनकी सृजनशीलता तो प्रधानतः भाव या विचार को ही महत्त्व देती है। वे कहते भी हैं, 'कला कला के लिए का सिद्धांत मिथ्या है।' उनकी दृष्टि में काव्य की कसौटी क्या है? इस संदर्भ में उनका कहना है—"मैं काव्य का एक ही मानदंड मानता हूँ और वह यह है कि हमारी धमनियों पर रक्त पर, हृदय पर, चित्त पर, मन पर, प्राणों पर कैसा प्रभाव पड़ता है...।" (*प्रलयवीणा,* डॉ. सुधीन्द्र, आमुख पृ. 1)

द्विवेदी जी का कहना है कि 'मैं काव्य में इसको सर्वोच्च स्थान देता हूँ। भारतीय काव्यशास्त्र की मान्यताएँ मुझे प्रिय हैं; किन्तु काव्य अग्रजन्मा है। शास्त्र तो उसे समझने के लिए बनाए गए हैं। शास्त्र को समक्ष रखकर जो लिखा गया है, उसे शास्त्रीय काव्य कहा जाएगा; नैसर्गिक काव्य नहीं।"

फिर भी उनके काव्य में कल्पना, शब्द चातुर्य अलंकार और छंद विन्यास के सहज ही दर्शन हो जाते हैं। उनकी रचनाओं में शिल्प की मौलिकता भी है साथ ही सजीवता भी ग़ज़ब की है। शब्द तो मानो उनके सामने हाथ जोड़े खड़े हों। उनकी सभी रचनाएँ भावोच्छ्वास, छंद विन्यास और शिल्प-विधान की दृष्टि से उत्तम सृष्टियाँ हैं। जहाँ भावों का उद्रेक काव्य को सरस, सुग्राह्य बनाकर असीम आकर्षण उत्पन्न करता है, वहीं भाषा प्रयोग, कल्पना, छंद विधान अलंकार-योजना उसे काव्यगत चमत्कारिता और सौन्दर्य भी प्रदान करती है। *भैरवी* में कवि सांगरूपक के माध्यम से इसकी ओर संकेत भी करता है—

कल्पना पंख फैलाती है
छू छोर क्षितिज के आती है।
भावनाएँ डुबकियाँ खाती है
सागर मथ अमृत लाती है
वे शब्द विहंग से गतिमान
ये छंद मलय से धावमान
प्रतिमा की डाली पुष्पमान
तनता मृदु कविता का वितान।

द्विवेदी जी के काव्यगत अभिव्यंजना-शिल्प को हम निम्न बिन्दुओं के माध्यम से सहज ही समझ सकते हैं।

भाषा

भाषा, सामान्यतः भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। भाषा से अभिप्राय यहाँ काव्य-भाषा से है, जो काव्येतर सामान्य भाषा से विशिष्ट है। कविता की सार्थकता इस बात में है कि वह शब्दों के यथोचित संयोजन द्वारा मानव मन की अनुभूतियों, विचारों और दशाओं का पुनः सृजन कर सकने में समर्थ हो। सोहनलाल द्विवेदी की काव्य-भाषा इस दृष्टि से पूर्ण सक्षम है। उनका शब्द भंडार पर्याप्त समृद्ध है। शब्द-चयन की प्रांजलता उनके छंदों में बराबर प्राप्त होती है। उनकी काव्य-भाषा मुख्यतः तत्सम प्रधान है और खड़ी बोली के काव्यगत मानक रूप को सहज ही व्यक्त करने में समर्थ है।

कहीं शृंगी थे कहीं विषाणु
लिए था कोई रक्त कपाल
दानवों के कंठों पर पड़ी
थिरकती थी मुंडों की माल। (*संजीवनी*, पृ. 52)

कवि की भाषा बड़ी सरल और परिनिष्ठित और प्रांजल है। उनके शब्द प्रयोग का वैशिष्ट्य यह है कि विषय और प्रसंग चाहे कोई भी हो, दुरूहता अथवा कृत्रिमता का आभास नहीं देती। भाव-प्रवाह अविरल गति से चलता रहता है। देखिए–

जब सारी दुनिया सोती थी
तब तुमने ही उसे जगाया,
दिव्य ज्ञान के दीप जलाकर
तुमने ही तम दूर भगाया
तुम्हीं सो रहे दुनिया जगती!
यह कैसा मद है मतवाले?
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी,
जागो मेर मतवाले। (*भैरवी से*)

सोहनलाल द्विवेदी जी जहाँ तत्सम शब्दावली का बड़ी ही प्रवाहमयी भाषा में प्रयोग करते हैं, वहीं वे गाँधी जी की 'हिन्दुस्तानी' से भी प्रभावित हैं और अरबी-फ़ारसी की मिश्रित शब्दावली का प्रयोग भी धड़ल्ले से कहते हैं–

तेरी दौलत पर किसान!
तेरी मेहनत पर किसान!

तेरी हिम्मत पर किसान!
तेरी ताक़त पर किसान। (*भैरवी*, किसान)

द्विवेदी जी की काव्य-भाषा के सारल्य, उसकी सहजता और लोकप्रियता का रहस्य संभवतः यह है कि वे केवल तरुणों और जवानों के ही नहीं, बच्चों के भी कवि हैं। ग्रामीण जनता की रोज़मर्रा की शब्दावली भी उनकी काव्य-भाषा को और भी चमत्कारिता प्रदान करती है–

जगमग नगरों से दूर-दूर, है जहाँ न ऊँचे खड़े महल
टूटे-फूटे कुछ कच्चे घर, दिखते खेतों में चलते हल;
पुरई-पालों, खपरैलों में रहिमा-रमुआ के नावों में
है अपना हिन्दुस्तान कहाँ? वह बसा हमारे गाँवों में।

लक्षणा-सौन्दर्य

अभिधा ही नहीं लक्षणा-सौन्दर्य भी द्विवेदी जी के काव्य का विशिष्ट गुण है। देखा जाए तो लक्षणा शब्दों की रूढ़ अर्थ-सीमाओं को तोड़कर काव्य-भाषा में पारदर्शिता एवं गहन भाव-गरिमा का संचार करती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, "अगोचर बातों या भावनाओं को भी, जहाँ तक हो सकता है कविता स्थूल गोचर रूप में रखने का प्रयास करती है। इस मूर्त विधान के लिए वह भाषा की लक्षणा-शक्ति से काम लेती है।" (*रस मीमांसा*, पृ. 33)

द्विवेदी जी की काव्य-रचना *कुणाल* में लक्षणा-सौन्दर्य देखते ही बनता है। मलयानिल की कोई वाणी नहीं है, किन्तु वह फिर भी कथा-सी कहता बह रहा है। यह लाक्षणिक प्रयोग ही है, जो भावों में सौन्दर्य प्रदान करता है–

मलयज धीरे-धीरे बहता
मन में मधुर कथा-सी कहता।

यही लक्षणा-सौन्दर्य *पूजा गीत* की इन पंक्तियों में भी विद्यमान है–

जब हृदय का तार बोले
शृंखला के बंध खोले।

सूक्तियाँ और मुहावरे

काव्य-भाषा में निहित भावों को अधिक व्यापकता और प्रामाणिकता प्रदान करने के लिए कवि मानव समाज की शाश्वत अनुभूतियों को सूक्तियों के माध्यम से प्रस्तुत कर अभिव्यक्ति में सौन्दर्य ला देता है। जीवन के अनुभूत सत्य स्थायी मूल्य के रूप में भावों में सर्वमान्यता और सर्वग्राह्यता ला देते हैं। *पराधीन सपनेहु सुख नाहि*

तुलसीदास द्वारा व्यक्त इस सूक्ति के सहारे कविवर सोहनलाल द्विवेदी जी भी पराधीनता को अभिशाप मानते हुए कहते हैं–

पराधीनते! सर्वनाश तेरा हो जग में
कुछ न सोचने देती, तू मानव को मग में। (*सेवाग्राम* से)

मुहावरा प्रयोग द्वारा काव्य भाषा जन सामान्य के लिए विशेष रूप से सुस्पष्ट और आत्मीय बन जाती है, क्योंकि मुहावरा काव्य-भाषा का वह सहजात सहचर है, जो दीर्घकालीन अनुभवों और परंपरा प्राप्त तथ्यों का सार-तत्त्व अति संक्षेप में प्रस्तुत कर कवि-कृत्य को अधिक सुकर बना देता है। द्विवेदी जी की भाषा में मुहावरों का प्रयोग बहुलता से मिलता है। देखिए–

(क) तेरा लोहा जो सके मान,
किसमें इतना बल है महान। –(*भैरवी*)

(ख) तट पर पटक शीश रह जाता
यह किस दुःख का अवलेखा। –(*वासंती*)

(ग) शीश हथेली पर ले करके,
खुल कर खेले सत्य कहे। –(*चेतना*)

अलंकार-योजना

सामान्यतः वक्तव्य की विभिन्न चमत्कारपूर्ण विधाओं को 'अलंकार' की संज्ञा दी गई है। अभिनव गुप्त के अनुसार किसी वक्तव्य को सामान्य जनता की साधारण बोलचाल से भिन्न, विचित्र और वैचित्र्यपूर्ण शैली से कहना ही 'अलंकार' है। यह उक्ति-वैचित्र्य अनेक प्रकार का होता है। इनके आधार पर अलंकारों की संख्या भी अनेक है। अलंकार के कारण काव्य की संवेद्यता एवं ग्राह्यता सहज हो जाती है, क्योंकि अलंकार स्वयं ही सौन्दर्य रूप है।[1] वास्तव में काव्य के सौन्दर्य का स्वरूप उसके विभिन्न अंतर्बाह्य तत्त्वों से संघटित होता है, जिनमें से एक 'अलंकार' भी है। सोहनलाल द्विवेदी के काव्य में अलंकारों का प्रयोग कहीं-कहीं काव्य-वस्तु को अभिव्यंजनागत सौन्दर्य संपृक्त करने के उद्देश्य से अनायास हो गया है; कहीं भी सायास अलंकरण की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर नहीं होती। द्विवेदी जी का मानना है कि 'अलंकार निरूपण के लिए जो काव्य लिखा जाएगा वो काव्य नहीं रहेगा।' डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा के शब्दों में, "पं. सोहनलाल द्विवेदी का कवि शब्द चमत्कार के मोह में नहीं पड़ा, उसकी वृत्ति अधिकांशतः निज अनुभूतिजन्य संकल्पनाओं के

1. काव्य ग्राह्यमलंकारात् सौन्दर्यमलंकार–वामन, काव्यालंकार सूत्र वृत्ति-1, 1-2

संप्रेषण-धर्म के निर्वाह में ही केन्द्रित रही है। (*सोहनलाल द्विवेदी और उनका काव्य*, पृ. 188) वर्णों, अक्षरों और शब्दों की विशेष क्रम से आवृत्ति 'शब्दालंकार' कहलाती है। समान वर्णों की आवृत्ति अनुप्रास-विधान के मूल में निहित है।

द्विवेदी जी के गीतों, प्रबंध काव्यों में *अनुप्रास अलंकार* के सहज ही दर्शन होते हैं। डॉ. मल्होत्रा ठीक ही कहते हैं कि 'अनुप्रास अलंकार द्विवेदी जी के काव्य शरीर में सर्वत्र भीगे पट-सा लिपटा है, जो उसकी अंतःवाह्य कला-कांति को स्पष्टतः लाभासित कर देता है।

माणिक मरकत मय सिंहासन था स्वर्णछत्र ऊपर शोभन
चारण करते थे उच्चारण, गर्वित कलिंग के विजय गीत।

(*कुणाल* से)

इसी प्रकार वीप्सा अलंकार की योजना भी द्विवेदी जी के काव्य में सहज ही प्राप्य है। 'तुलसीदास' शीर्षक गीत में शिल्पगत उत्कर्ष का श्रेय वीप्सा अलंकार को ही जाता है—

है शब्द-शब्द में भरा भाव
है छंद-छंद में भरा ज्ञान।
है वाक्य-वाक्य में अमर वचन,
वाणी में वीणा का विधान।

(*सेवाग्राम* से)

अर्थालंकार

अर्थ को चमत्कृत या अलंकृत करनेवाले अलंकार को अर्थालंकार माना जाता है। द्विवेदी जी के काव्य में सायास अलंकार की प्रवृत्ति कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती, वे तो विशुद्ध भावना के कवि थे। फिर भी, उनके काव्य में यत्र-तत्र उपमा, रूपक, दृष्टांत, उल्लेख, विरोधाभास आदि अलंकारों के दर्शन सहज ही हो जाते हैं। यथा—

1. उपमा (क) *दूर्वा के नव-नव अंकुर-सी*
जगती नव-नव अभिलाषा।

—(*कुणाल*)

(ख) *झुकी साथ ही अचल प्रार्थना-सी कुमारी भी*
सावित्री बन रहने वाली सत्यवान की नारी सी।

(*कुणाल*)

2. रूपक—'सरदार चूड़ावत' आख्यान गीति की ये पंक्तियाँ रूपक अलंकार का उदाहरण हैं—

उनके मन कुसुम बीच
छिपा है संदेह कीट
काट रहा है क्रम-क्रम से
उनकी देशभक्ति को
उनकी आत्मशक्ति को

(वासवदत्ता)

3. दृष्टांत– ज्यों भिखारिणी को मिल जावे किसी रत्न का अनुपम दान,
हुई कांचना प्रमुदित जैसे दरिद्रिणी हो धनी महान।

(कुणाल)

4. विरोधाभास– कितना आह अधर्म! धर्म पर जो चलता है,
उसको भी दुर्देव दुःख से भी दलता है।
तिष्य रक्षिता भी है कितनी चक्र चालिनी
अधरों में है अमृत, किन्तु है स्वयं व्यालिनी।

(कुणाल)

इस प्रकार हम देखते हैं कि पं. सोहनलाल द्विवेदी का काव्य विभिन्न अलंकारों से सहज ही अलंकृत है।

बिम्ब-योजना

व्यक्ति के मानस पटल पर अतीत की तथा कभी अस्तित्व न रखनेवाली वस्तुओं और घटनाओं की असंख्य प्रतिमाएँ भी होती हैं। बिम्ब शब्द इसी मानस प्रतिमा का पर्याय है। बिम्ब-योजना द्वारा कवि अपनी काव्य भाषा को केवल चित्रधर्मी ही नहीं बनाता, अपितु उसे अपने हृदय के संवेग तथा इससे आप्लावित भी कर देता है। साहित्य-रचना में बिम्ब-विधान का स्वरूप बहुत कुछ कवि या लेखक के अपने व्यक्तित्व पर निर्भर करता है।

कविवर सोहनलाल द्विवेदी का काव्यगत शिल्प-विधान प्रायः ऐन्द्रिय बिम्बों की परिधि में सीमित है। इनमें चाक्षुष, श्रव्य, स्पृश्य, घ्राण आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जहाँ तक चाक्षुष बिम्ब का संबंध है, द्विवेदी जी के काव्य में इन बिम्बों की प्रधानता है। प्रबंध काव्यों में तो इसके दर्शन होते ही हैं, मुक्तक गीतों में भी विभिन्न स्थितियों और अनुभूतियों का प्रत्यक्षाभास कराने में ये सहायक हुए हैं। प्रकृति चित्रण में द्विवेदी जी ने इन बिम्बों के सहारे अनेक चित्र उकेरे हैं। सांध्य गगन का रंगीन चित्र देखिए मानो चलचित्र की भाँति दृष्टि-पथ में घूम जाता है–

सांध्य अंबर के अरुण कुछ-कुछ लाक्षा के लाल,
नील पीत विशुभ्र कुछ-कुछ श्याम ज्यों घन माल।

कुछ वने काषाय, कुछ भूरे हरित छवि धाम,
कुछ अभी नवजात खग के पंख से अभिराम।

—कुणाल से

ग्राम कन्या का प्रत्यक्ष और सजीव चित्रण करनेवाला चाक्षुष बिम्ब यहाँ द्रष्टव्य है—

यह ग्राम कन्या चली जा रही पथ में
पहने कानों पर तरकी मुख पर वाला।
अधखुले वाल रूखे लहराते सिर पर
आँखों में अंजन वड़ा-वड़ा-सा काला।

(चित्रा से)

श्रव्य बिम्ब के भी अनेक सुन्दर दृश्य द्विवेदी जी के काव्य में उपलब्ध है। उनके काव्य में अधिकांशतः हृदयोत्तेजक आवेगमयी ध्वनियाँ बिम्बायित हैं। देखिए—

(क) *ये नुपुर की रुनझुन-रुनझुन*
ये पायल की छम-छम, छम धुन
ये गमक मीड़ मीठी गुन-गुन।

(भैरवी)

(ख) *ये धन धन धन घंटारव*
ये झांझ मृदंग नाद भैरव
ये स्वर्ण धाल आरती विभव
ये शंख ध्वनि, पूजन कलरव।

(भैरवी)

इसी प्रकार स्पृश्य बिम्ब और घ्राण बिम्ब के अनेक चित्रण द्विवेदी जी के काव्य में प्राप्य हैं। यहाँ वासंती से एक चित्र देखिए—

मृग शावक प्रत्यय से आकर
पास अंग सहलाते हैं।

यही नहीं, उपलक्षित बिम्बों की भी द्विवेदी जी के काव्य में कोई कभी नहीं है। देखिए—

कुसमों की नीलम प्याली में
ले माणिक मदिरा अभिराम
मंद चरण घर चला समीरण
पिला रहा जग का अविराम

(चित्रा से)

प्रतीक विधान—'प्रतीक' (Image) शब्द का प्रयोग उस दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य विषय का प्रति-विधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है। 'प्रतीक' वह है, जो अपने से भिन्न किसी अन्य प्रतीयमान का अर्थ बोध कराता है। डॉ. कुमार विमल के शब्दों में, "वह ऐसा 'अप्रस्तुत' (उपमान) है, जो प्रस्तुत का अपने भीतर निगरण किए रहता है।"

द्विवेदी जी के काव्यगत अभिव्यंजना शिल्प में प्रयुक्त अधिकांश प्रतीक प्रकृति से गृहीत हैं। इनके काव्य में अंधकार, अलि, आंधियां, आलोक, उजियाली, उलूक, उपवन, कलिका, खग, धन, छाया, जलनिधि, झंझा, झोंपड़ी, तरु, तूफ़ान, धूप, पतझर, प्रभात, प्रातः, फूल, शूल, बिजली, मधु, मधु ऋतु, मधुप, मरुस्थल, मेघ, रनिवास, रजनी, रात, संध्या, लहर, विहग और शशि जैसे अनेक प्रतीकों के उदाहरण प्राप्य हैं।

इनमें से कुछेक के दृष्टांत यहाँ प्रस्तुत हैं—'प्रभात' अर्थात् सवेरा। यह प्रतीक आशा, सुख एवं साफल्य का द्योतक है। *कुणाल* के जीवन-दर्शन को समझने में यह प्रतीक पर्याप्त सहायक है—

भोगा अब तक धन, धरा, धाम
क्या, सुख न मिला, मुझको प्रकाम,
जीवन प्रभात था कल ललाम।

इसी प्रकार 'मधु' प्रतीक रूप में जीवन के यौवनानंद एवं सौन्दर्य रस के द्योतक के रूप में प्रयुक्त हुआ है--

उड़ गए मधुप थे जो कलिका में मधु देख
रूप लुब्ध होकर बड़े
आते इस ओर खिंचे

(*वासवदता*)

द्विवेदी जी ने मेघ को विपत्ति, युद्ध तथा अनिष्ठा के प्रतीक रूप में प्रस्तुत कर देशवासियों को सावधान किया है—

घिर रहे मेध काले-काले
अंवर में भूतल में
× × ×
देखना तुम्हारे आस-पास
कोई जयचंद न हो।

(*मुक्तिगंधा*)

द्विवेदी जी ने इन प्रतीकों का प्रयोग मात्र व्यंजना शिल्प के उपकरण रूप में ही नहीं किया, अपितु इन्हें अपने विशिष्ट जीवन-दर्शन की सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम भी बनाया है।

छंद-विधान

छंद का स्वाभाविक अर्थ है—आचरण अथवा प्रवाह। सायण के कथनानुसार, "छंद कलाकार और कलाकृति को अकाल मृत्यु से बचाए रखते हैं।" अभिप्राय यही है कि छंद-बद्ध काव्यकृति चिर स्थायी होती है। द्विवेदी जी के अधिकांश प्रयाण गीत ऐसे छोटे छंदों में रचित हैं, जिन्हें वीर बाँकुरे अपने क़दमों की थाप के साथ गाते हुए आगे बढ़ते हैं।

छंद दो प्रकार के होते हैं—(1) वार्णिक और (2) मात्रिक। आधुनिक काल में छंद के बंद टूट जाने से 'मुक्त' छंद के प्रयोग की प्रवृत्ति भी सर्वत्र दिखाई देती है। द्विवेदी जी ने अपनी काव्य रचनाओं में तीनों ही छंद रूपों का यथानुकूल प्रयोग किया है, फिर भी वार्णिक छंदों की अपेक्षा मात्रिक छंद उन्हें अपनी विचार तरंगों का नियमन करने में अधिक सहायक प्रतीत हुए हैं। मात्रिक छंदों के अंतर्गत उन्होंने बारह मात्राओं वाले लघु छंद से लेकर तीस मात्राओं वाले दीर्घ छंद तक अनेक छंद रूप प्रयुक्त किए हैं, जिनमें विशेषतया तोमर, हाकलि, विजात, पद्धरि, पादाकुलक, राधिका, रोला, रूपमाला, दिग्पाल, गीतिका सार, हरिगीतिका, मरहटा, तार्टक तथा लावणी छंदों के नाम उल्लेखनीय हैं।

गेयता

द्विवेदी जी के छंदों में गेयता स्पष्ट रूप से विद्यमान है। उनकी अधिकांश कविताएँ 'गीतिकाव्य' के अंतर्गत समाविष्ट की जा सकती हैं। रचनाओं के अतिरिक्त उनका प्रायः समूचा पद्यबद्ध कृतित्व 'गीत रूप' में ही शब्द-बद्ध है। उनके अधिकांश काव्य-संग्रह वस्तुतः 'गीत संग्रह' हैं। स्वयं कवि ने उन्हें गीत, पूजा गीत, प्रयाण गीत, विप्लव गीत, पथगीत, विद्यागीत, अभियान गीत, खादी गीत, मंगलगीत, जागरण गीत, आदि की संज्ञा दी है। इन गीतों में गेयता है। उनके अधिसंख्यक गीत राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत है, जिनमें *भैरवी, पूजागीत, युगाधार, प्रभाती, सेवाग्राम, चेतना, जयगाँधी, गाँध्ययन मुक्तिगंधा, जय भारत जय* और *तुलसी दल* विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त *चित्रा, वासंती* आदि अंतर्मुखी चेतना के भावात्मक गीतिकाव्य हैं। वचनेश त्रिपाठी ने उचित ही कहा है कि "साहित्य जगत में पं. सोहनलाल द्विवेदी उचित रूप से ही 'गीतों के देवता' विशेषण से विभूषित है।"

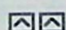
कविता की बुनियादी माँग लय है। पं. सोहनलाल द्विवेदी ने इस माँग की पूर्ति अपनी आरंभिक रचनाओं से ही शुरू कर दी थी। *वासवदत्ता* के आख्यान गीत मुक्त छंद से रचित होने पर भी उनकी गीतिमयता का आधार 'लय' ही है। 'लय की निष्पत्ति गति, प्रवाह और यति विराम आदि के पारस्परिक एवं क्रमिक संघात से होती है। (*हिन्दी साहित्य कोश*, भाग-1, पृ. 341)

द्विवेदी जी के काव्य में लयात्मकता की जीवंत झलक अनेकत्र देखी जा सकती है। *वासवदत्ता* के एक गीत में भिन्न-भिन्न बिन्दुओं पर किया गया तुक विराम लय को विलक्षण गतिमयता प्रदान कर रहा है—

देख सूखी आँखों से
छिन्न हुई पाँखों से
नीरव निरभर नभ
करती नत आनन मन
भरती विश्वास
धरती हाथ निज माथ पर।

इस प्रकार यदि कहा जाए कि द्विवेदी का हिन्दी गीतिकाव्य में प्रमुख ही नहीं, अनुकरणीय स्थान रहा है तो कोई अत्युक्ति न होगी। हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' ने उनकी काव्य-शैली पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि "द्विवेदी जी ने हिन्दी कविता को भाषा का जो प्रवाह नवीन गीत-लय के माध्यम से दिया, वह अनेक कवियों के लिए अनुकरणीय बना। उनकी कविता का शिल्प ओज और प्रसाद गुणों का अद्भुत सामंजस्य प्रस्तुत करता है, जिसमें सजीव बिम्ब-रचना की प्रभूत क्षमता निहित है। समकालीन जीवन से रचित उनके प्रतीक राष्ट्रीय अस्मिता की नवीन मिथकीय सुंदरता हिन्दी भाषा को सौंपते हैं।" (*समीक्षालोक*, अक्टूबर 1960)

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि कविवर सोहनलाल द्विवेदी ने 'कला कला के लिए नहीं, जीवन के लिए है' अपनी इस मान्यता का सर्वत्र निर्वाह किया है। अभिव्यंजना पक्ष उनके अनुभूति पक्ष पर कहीं भी हावी नहीं होने पाया। फिर भी, काव्य कला के अपेक्षित आयामों का निर्वाह इनके काव्य में सहज ही प्राप्य है। द्विवेदी जी ने स्वयं अपनी कविताओं के संबंध ठीक ही कहा है कि 'मुझे इन कविताओं के संबंध में कुछ नहीं कहना, जो कुछ कहना है, वह ये कविताएँ स्वयं आपसे कहेंगी?"



7

योगदान

पं. सोहनलाल द्विवेदी का रचना संसार बहुआयामी है। उन्हें जहाँ बालगीतों की सशक्त रचनाओं ने बालकाव्य का जनक बनाया, वहीं राष्ट्र-प्रेम से ओत-प्रोत उनकी ओजस्वी कविताओं से उन्हें राष्ट्रकवि के रूप में सर्वत्र मान्यता मिली। उन्होंने उस काल में काव्य के क्षेत्र में पदार्पण किया, जब देश में विदेशी दासता से मुक्ति के लिए स्वतंत्रता की रणभेरी बज रही थी। महात्मा गाँधी इस आंदोलन के जननेता के रूप में युवकों का आह्वान कर रहे थे। युवा सोहनलाल द्विवेदी भी इस राष्ट्रीय आंदोलन से अप्रभावित न रह सके। सातवीं कक्षा में ही उन्होंने ब्रिटिश राज की दासता के विरुद्ध आवाज़ उठाई और कह दिया 'गुलामी की मिठाई से आज़ादी की भूख भली है।' उनके छात्र हृदय में गाँधी दर्शन की पहली कोंपल उस अवसर पर फूटी, जब वे *प्रताप* के संपादक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के संपर्क में आए। वे गाँधी जी के आदर्शों से प्रभावित होकर उनके सच्चे अनुयायी बन गए। अब उनकी काव्य रचनाओं के केन्द्र बिन्दु 'गाँधी' थे। गाँधी उनके आदर्श पुरुष थे। बापू के प्रति अटूट आस्था ने इनके समस्त काव्य को गाँधी के रंग में रंग दिया था। इसीलिए उनके काव्य में गाँधी दर्शन से प्रभावित ज्ञान, भक्ति एवं कर्म की त्रिवेणी बहती है, जिसमें सामान्य व्यक्ति भी गोता लगाकर देश के लिए अपना सब कुछ न्योछावर करने के लिए तत्पर हो जाता था। निःसन्देह यदि गाँधी युग के स्वाधीनता-संग्राम की झाँकी किसी एक कवि के काव्य में देखनी है तो वे हैं पं. सोहनलाल द्विवेदी। द्विवेदी जी वीणावादिनी के ऐसे वरद पुत्र थे, जिन्हें समस्त भारतीय वाङ्मय से अनुराग था, किन्तु महात्मा गाँधी के अनन्य भक्त होने के कारण गाँधीवादी विचारधारा के अग्रदूत थे। उनके समस्त भाव-चक्र की धुरी राष्ट्र-धर्म है। राजर्षि टंडन के शब्दों में, "इनके काव्य का जीवन-सत्य है–गाँधी दर्शन, जिसे एक अनुपम निधि के रूप में पाकर भारत अपनी दरिद्रता में भी भाग्यवान है। इनकी वाणी में जहाँ शिशुओं के लिए उल्लास का, तरुणों के लिए उद्बोधन का, कृषकों और श्रमिकों के लिए स्वाभिमान और विद्रोह का संदेश है, वहीं भौतिकता की अँधेरी गलियों में भटकते देशवासियों के लिए नैतिक आस्था का मधुर स्वर भी सुनाई पड़ता है।"

राष्ट्रीयता मात्र विचार नहीं, वह संवेदना और आचरण भी होती है। राष्ट्रीय काव्य वही है, जिसमें देश की सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक परंपराओं

का विश्लेषण, समकालीन स्थितियों का यथार्थ चित्रण तथा उज्ज्वल भविष्य के लिए जागरण का भाव निहित होगा। इस दृष्टि से द्विवेदी जी का काव्य पूर्णतया 'राष्ट्रीय' है।

द्विवेदी जी के काव्य में मातृभूमि-वंदना, अतीत का गौरवगान, स्वातंत्र्य-प्रेम, शहीदों के प्रति नमन, स्वदेशी आंदोलन, अन्याय के प्रति क्षोभ, उद्‌बोधन तथा उदात्त मानव मूल्यों का सम्मान जैसे राष्ट्रीयता के सभी घटक प्राप्य हैं। इस प्रकार राष्ट्र की प्राचीन गरिमा, उसकी तत्कालीन (स्वतंत्रता से पूर्व) दयनीयता और उसकी विविध गतिविधियों का चित्रांकन उनके काव्य में स्वाभाविक रूप से हुआ है। द्विवेदी की काव्य रचनाएँ स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योतर काल में हुई थी। इसलिए उनकी रचनाओं में जहाँ राष्ट्रीय तेजस्विता और मनस्विता का अभिनंदन और अभिषेक है, वहीं विपथगा स्थितियों, परिस्थितियों पर सीधी-सच्ची चोट भी है; आक्रोश भी है।

स्वतंत्रता के बाद जब सामाजिक स्थिति बिगड़ती दिखाई दी, चतुर्दिक अधःपतन और विघटनकारी प्रवृत्तियाँ सिर उठाने लगीं तो कवि को घुटन और पीड़ा का अनुभव होने लगा। उनकी वाणी देश के कर्णधारों को चेतावनी देने पर विवश हो गई–

मुझे नहीं है लोभ राज्य के सम्मानी सम्मान का
मैं जनता का साथी हूँ। मैं कवि हूँ हिन्दुस्तान का।
खोज रहा हूँ माँझी माँ की इस डगमग पतवार का
मुझे भरोसा रहा नहीं अब दिल्ली के दरबार का।

यहाँ कवि का विद्रोही स्वर तो सुनाई पड़ता है, किन्तु उसने संयम नहीं खोया है, वह इस लड़खड़ाती नाव का सही माँझी ही खोज रहा है।

कवि राष्ट्रीयता का गायक होते हुए भी, अपने दो गीतिकाव्यों *चित्रा* (1943) और *वासंती* (1943) में हृदय की संवेदनाओं के साथ मानसिक कल्पनाओं में भी विहार करता है। इनमें कवि की अंतर्मुखी चेतना प्रतिबिम्बित होती है। इनमें मानव मन की प्रबलतम प्रवृत्ति 'प्रणय' की झलक स्वतः अपनी विद्यमानता का संकेत दे देती है। *चित्रा* में प्रणय संवेग का आलंबन भी समकालीन छायावादी काव्य का नायक 'अज्ञात प्रिय' है। *वासंती* में भी प्रकृति के कोमल, रमणीय, प्रणयोतेजक रूप का ही प्रधान चित्रण है। *चित्रा* की भाँति *वासंती* के कुछ गीतों में भी जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा के छायावादी गीतों की प्रतिच्छाया प्रतिबिम्बित होती है। इसे समकालीन काव्य का प्रभाव कहिए या युवा मन का स्वभावजन्य आकर्षण। इस दौर की इन रचनाओं में प्रकृति, सौन्दर्य, प्रणय एवं कल्पना के बिम्ब जाल में लिप्त परंपरागत लक्षणा, व्यंजना और प्रतीक तथा उपमान

के सहारे वह कलात्मक सुषमा की ओर भी अग्रसर होता दिखाई पड़ता है। उनका एक चित्र प्रस्तुत है–

सुषमा की प्रतिभा
एक तरुणी दिवांगना-सी
विधि की अनूप रचना-सी
सुन्दरी प्रणय अभिलाषा-सी
मादक मदिरा-सी
मोहक इन्द्रधनुष-सी

पं. सोहनलाल द्विवेदी के काव्य में रूप-चित्रण के भी श्रेष्ठ उदाहरण प्राप्य हैं। *कुणाल* रचना में तिष्यरक्षिता और कुणाल का तारुण्य अंकित करते हुए सुंदर उपमाओं का संग्रह है। अशोक के ऐश्वर्य और वैभव का वर्णन देखिए–

सुख श्री संपत्ति के कमल कुंज
खिल उठे रत्न धन पत्र पुंज।
उल्लास लासमय मधुप-गुंज
था कहीं पीड़ा का विलाप

× × ×

था वाम पार्श्व में खड्ग नग्न,
ज्यों राज्यश्री हो मौर्य मग्न
पद तल लुंठित हो भक्ति लग्न
अकलंकित उज्ज्वल तीक्ष्ण धार।

श्रृंगार रस का उत्कृष्ट परिपाक भी देखते ही बनता है–

हो गए रूप पर नयन मुग्ध
उत्कंठा से उर सिंधु क्षुब्ध।
उत्सुकता से यौवन विक्षुब्ध
था पड़ा लक्ष्य पर बाण।

कामना के पक्षी मधुमय कलरव करते हैं। वासना की कलियाँ अपना मधु वैभव विखेर रही है। इस श्रृंगारिक बेला को भी तो निहारिए–

लगे कामना के पक्षी दल करने मधुमय कलरव,
लगी वासना की कविताएँ, विखराने मधु वैभव।

छंद-संरचना एवं लय बोध द्वारा काव्य प्रवाह को गेयात्मक स्वरूप प्रदान करने में भी द्विवेदी जी की कला चेतना पर्याप्त सजग रही है। सुमित्रानंदन पंत जी ने उनकी कविता के विषय में लिखा है–

"उनकी कविता सुविज्ञ साहित्यिकों को ही नहीं जनता जनार्दन की भी प्रिय वस्तु है। उनकी सरल प्रसादमयी भाषा, सहज भावुकता, सुबोध कल्पना तथा विश्वास और भावनामयी देश-भक्ति जनता के लिए विशेषतः आकर्षक है। श्री सोहनलाल जी ने उस भाव तत्त्व को असमय वाणी देने का व्यर्थ प्रयत्न नहीं किया है, उन्होंने अहिंसात्मक क्रांति को, विद्रोह को तथा सुधारवाद को अत्यंत सरल, सबल और सफल ढंग से काव्य बनाकर जन साहित्य बनाने के लिए मर्मस्पर्शी और मनोरम बना दिया है।"

प्रो. अमरनाथ झा कविवर द्विवेदी जी की काव्य रचना के संबंध में लिखते हैं, "आज के कवियों में श्री सोहनलाल जी द्विवेदी की कविताओं की राष्ट्रीयता तथा प्रभावोत्पादकता से साहित्य मर्मज्ञ बहुत प्रभावित हैं।...काव्य का लक्षण यह है कि वह सद्यः हृदयग्राही हो। अतः सोहनलाल जी की कविता अवश्य उच्च कोटि की है। इसमें प्रत्येक रुचि को संतुष्ट करने की सामग्री है।...इनकी कृति शिष्ट है, रस पूर्ण तथा शक्तिपूर्ण है।" (प्राक्कथन, *सेवाग्राम*)

कविवर द्विवेदी जी के काव्य में कुछ आलोचक केवल अभिधा को ही देखते हैं। इससे क्या उनकी कविता निम्नस्तर की हो जाएगी? *प्रभाती* की भूमिका में कवि स्पष्ट करता है, "आरंभ से ही बहुजन हिताय लिखने की मेरी चेष्टा रही है। जान बूझकर मैं कल्पना के पंखों पर चढ़कर हिम श्रृंगों पर नहीं उड़ा हूँ। क्योंकि उतनी दूर मेरा पाठक न जा सकता था। काव्य की लक्षणा एवं व्यंजना का मोह भी मुझे छोड़ना पड़ा। अभिधा में ही मैंने अपना काम चलाया।"

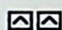
द्विवेदी जी की कविता भारतीय संस्कृति का अमर संगीत है। वह स्वस्थ मन से प्रवाहित होनेवाली मंदाकिनी है। कुँवर राजेन्द्र प्रताप सिंह लिखते हैं, "द्विवेदी जी की कविता कुंठा एवं कामुकता आदि के गंदे नालों द्वारा छुई ही नहीं गई। वह तो शुद्ध स्वच्छ, सरल तरल गंगाजल है, सर्वसुलभ रुचिकर एवं पुष्टिकर। उसका प्रवाह सहज है प्रयत्नज नहीं। वह अविचारित रमणीय है, सुविचारित शुष्क नहीं। उनकी वाणी पश्चिम की चकाचौंध से भ्रांत नहीं, साथ ही वह रूढ़िग्रस्त भी नहीं असंदिग्ध रूप से भारतीय संस्कृति में जो भी उन्हें सुंदर लगा, उन्होंने उसे कविता के माध्यम से हमें देने का सफल प्रयास किया है।"

द्विवेदी जी की रचनाओं में स्वस्थ मानस की अभिव्यक्ति है। विलास के स्थान पर सहज एवं शुद्ध उल्लास की तरलता तथा प्रेमासक्ति के स्थान पर सेवा-भक्ति का सौरभ इनके काव्य की विशिष्टता है।

श्री शम्भूनाथ जी लिखते हैं, "अपनी समग्रता में द्विवेदी जी का साहित्य वह विराट पल्लव है, जिसमें ग्रीष्म के आतप में फुहार लानेवाले शांत बादल भी हैं और तड़ित की चमक लिए घोर गर्जन करनेवाले मेघ भी। रश्मियों का रेशमी स्पर्श भी है तथा पाषाण बरसानेवाला बादल राग भी।"

प्रसिद्ध काव्य मीमांसक राजेशखर ने तो द्विवेदी जी को विश्वस्तर का कवि बताते हुए यहाँ तक कहा है कि "कुछ कवियों की ही रचनाएँ विश्वभ्रमण का सौभाग्य पाती हैं। पं. सोहनलाल द्विवेदी ऐसे कवि हैं, जिनका काव्य 'विश्व कुतूहली' है। वह दिन अवश्य और अविलंब ही आएगा, जब उनकी काव्यकीर्ति कालिदास और तुलसी के समान समुद्र के उस पार तक पहुँचेगी।"

अस्तु हम कह सकते हैं कि पं. सोहनलाल द्विवेदी किसी 'वाद' विशेष के मायाजाल में नहीं पड़े थे। वे सीधे, सच्चे, सरल और भव्य प्रकृति के व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी खुली आँखों से बंदिनी भारत माँ और युगात्मा गाँधी जी का पावन दर्शन कर भाव विह्वलता के क्षणों में अंतर्वेदना, राष्ट्रीय पीड़ा, प्रेरणा, सुरुचि, संस्कृति एवं अहिंसक क्रांति के जो गीत गाए है, उनमें आदर्श, यथार्थ एवं समन्वयवादी दृष्टि के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय भावना ही परिलक्षित हुई है। यह देश और हिन्दी साहित्य उनके अप्रतिम योगदान को सदैव स्मरण रखेगा।



सोहनलाल द्विवेदी की प्रकाशित कृतियाँ

1. *भैरवी*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1941 ई.
2. *वासवदत्ता*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1942 ई.
3. *कुणाल*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1942 ई.
4. *चित्रा*, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, 1943 ई.
5. *वासंती*, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, 1943 ई.
6. *पूजागीत*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1944 ई.
7. *युगाधार*, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, 1944 ई.
8. *प्रभाती*, साहित्यभवन प्रा. लि., प्रयाग, 1944 ई.
9. *विषपान*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1945 ई.
10. *सेवाग्राम*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1946 ई.
11. *सुजाता*, सरस्वती पब्लिशिंग हाउस, प्रयाग, 1954 ई.
12. *चेतना*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1954 ई.
13. *गांध्ययन*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1969 ई.
14. *मुक्तिगंधा*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1972 ई.
15. *जय भारत जय*, साहित्यभवन प्रा. लि., इलाहाबाद, 1972 ई.
16. *तुलसीदल*, साहित्य भवन प्रा. लि., इलाहाबाद, 1980 ई.
17. *संजीवनी*, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1983 ई.
18. *किसान*, सरस्वती पब्लिशिंग हाउस, प्रयाग, 1940 ई.
19. *जयगाँधी*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1956 ई.

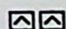
बालगीत-संग्रह

1. *दूध बताशा*, भारतीय भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, 1930 ई.
2. *पाँच कहानियाँ*, सरस्वती पब्लिशिंग हाउस, प्रयाग, 1940 ई.
3. *मोदक*, सरस्वती पब्लिशिंग हाउस, प्रयाग, 1940 ई.

4. *बिगुल*, साहित्य भवन प्रा. लि., इलाहाबाद, 1944 ई.
5. *शिशु भारती*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1949 ई.
6. *बाल भारती*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1953 ई.
7. *झरना*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1953 ई.
8. *बच्चों के बापू*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1956 ई.
9. *हँसो-हँसाओ*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1953 ई.
10. *बाँसुरी*, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1963 ई.
11. *दस कहानियाँ*, 1969
12. *नेहरू चाचा*, इंडियन प्रेस, प्रयाग 1963 ई.
13. *शिशु गीत*, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, प्रयाग, 1972 ई.
14. *यह मेरा हिन्दुस्तान है*, साहित्य भवन, प्रा. लि., प्रयाग, 1974 ई.
15. *जय जय स्वदेश*, साहित्य भवन प्रा. लि., प्रयाग 1974 ई.
16. *तितली रानी*, ज्ञान भारती, दिल्ली, 1974 ई.
17. *हुआ सवेरा उठो*, शिक्षा भारती, दिल्ली, 1976 ई.
18. *एक गुलाब*, शिक्षा भारती, दिल्ली, 1976 ई.
19. *गीत भारती*, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1979 ई.
20. *सुनो कहानी*, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1983 ई.
21. *रामू की बिल्ली*, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, 1983 ई.
22. *फूल हमेशा मुस्काता*, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, 1983 ई.
23. *शिशु गीतिका*, 1985 ई.
24. *प्यारे-प्यारे तारे चमको*, 1985 ई.

संपादित ग्रंथ

1. *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ*, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, 1944 ई.
2. *गाँधी शतदल*, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1970 ई.
3. *झंडा ऊँचा रहे हमारा*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1972 ई.



सोहनलाल द्विवेदी के कुछ लोकप्रिय गीत

पूजा गीत

वंदना के इन स्वरों में, एक स्वर मेरा मिला लो।

बंदिनी माँ को न भूलो,
राग में जब मत्त झूलो;
अर्चना के रत्नकण में एक कण मेरा मिला लो।

जब हृदय का तार बोले,
शृंखला के बंद खोले,
हो जहाँ बलि शीश अगणित, एक शिर मेरा मिला लो।

युगावतार गाँधी

चल पड़े जिधर दो डग, मग में, चल पड़े कोटि पग उसी ओर;
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि, पड़ गए कोटि दृग उसी ओर;
जिसके शिर पर निज धरा हाथ, उसके शिर-रक्षक कोटि हाथ;
जिस पर निज मस्तक झुका दिया, झुक गए उसी पर कोटि माथ।

हे कोटिचरण, हे कोटिबाहु! हे कोटिरूप, हे कोटिनाम!
तुम एकमूर्ति प्रतिमूर्ति कोटि! हे कोटिमूर्ति, तुमको प्रणाम!
युग बढ़ा तुम्हारी हँसी देख, युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख;
तुम अचल मेखला बन भू की, खींचते काल पर अमिट रेख।

तुम बोल उठे, युग बोल उठा, तुम मौन बने, युग मौन बना;
कुछ कर्म तुम्हारे संचित कर, युगकर्म जगा, युगधर्म तना।
युग-परिवर्त्तक, युग-संस्थापक, युग-संचालक, हे युगाधार!
युग-निर्माता, युग-मूर्ति! तुम्हें, युग-युग तक युग का नमस्कार!

तुम युग-युग की रूढ़ियाँ तोड़, रचते रहते नित नई सृष्टि;
उठती नवजीवन की नींवें, ले नवचेतन की दिव्य-दृष्टि।
धर्माडंबर, के खंडहर पर, कर पद-प्रहार, कर धराध्वस्त;
मानवता का पावन मंदिर, निर्माण कर रहे सृजनव्यस्त!

बढ़ते ही जाते दिग्विजयी, गढ़ते तुम अपना रामराज;
आत्माहुति के मणिमाणिक से मढ़ते जननी का स्वर्णताज!
तुम कालचक्र के रक्त सने दशनों को कर से पकड़ सुदृढ़;
मानव को दानव के मुँह से ला रहे खींच बाहर बढ़ बढ़।

पिसरती कराहती जगती के प्राणों में भरते अभय दान;
अधमरे देखते हैं तुमको, किसने आकर यह किया त्राण?
दृढ़ चरण, सुदृढ़ करसंपुट से तुम कालचक्र की चला रोक,
नित महाकाल की छाती पर लिखते करुणा के पुण्य श्लोक!

कँपता असत्य, कँपती मिथ्या, बर्बरता कँपती है थरथर!
कँपते सिंहासन, राजमुकुट, कँपते खिसके आते तू पर।
है अस्त्र-शस्त्र कुंठित, लुंठित, सेनाएँ करती गृह-प्रयाण!
रणभेरी तेरी बजती है, उड़ता है तेरा ध्वज निशान!

हे युग-द्रष्टा, हे युग-स्रष्टा,
पढ़ते कैसा यह मोक्ष मंत्र?
इस राजतंत्र के खंडहर में
उगता अभिनव भारत स्वतंत्र!

खादी-गीत

खादी के धागे-धागे में अपनेपन का अभिमान भरा।
माता का इसमें मान भरा, अन्यायी का अपमान भरा।
खादी के रेशे-रेशे में अपने भाई का प्यार भरा।
माँ-बहिनों का सत्कार भरा, बच्चों का मधुर दुलार भरा।

खादी की रजत चंद्रिका जब आकर तन पर मुसकाती है,
तब नवजीवन की नई ज्योति अंतस्तल में जग जाती है।
खादी से दीन-विपन्नों की उत्तप्त उसास निकलती है,
जिससे मानव क्या, पत्थर की भी छाती कड़ी पिघलती है।

खादी में कितने ही दलितों के दग्ध की दाह छिपी;
कितनों की कसक कराह छिपी, कितनों की आहत आह छिपी!
खादी में कितने ही नंगों, भिखमंगों की है आस छिपी;
कितनों की इसमें भूख छिपी, कितनों की इसमें प्यास छिपी!

खादी तो कोई लड़ने का है जोशीला रणगान नहीं;
खादी है तीर कमान नहीं, खादी है खड्ग-कृपाण नहीं।
खादी को देख-देख तो भी दुश्मन का दल थहराता है;
खादी का झंडा सत्य शुभ्र अब सभी ओर फहराता है!

खादी की गंगा जब सिर से, पैरों तक बह लहराती है,
जीवन के कोने-कोने की तब सब कालिख धुल जाती है!
खादी का ताज चाँद-सा जब मस्तक पर चमक दिखाता है;
कितने ही अत्याचार-ग्रस्त दीनों के त्रास मिटाता है।

खादी ही भर-भर देश-प्रेम का प्याला मधुर पिलाएगी;
खादी ही दे-दे संजीवन, मुर्दों को पुनः जिलाएगी;
खादी ही बढ़ चरणों पर पड़, नूपुर-सी लिपट मनाएगी,
खादी ही भारत से रूठी आज़ादी को घर लाएगी।

किसान

ये नभ-चुंबी प्रासाद, भवन, जिनमें मंडित मोहक कंचन,
ये चित्रकला-कौशल-दर्शन, ये सिंह-पौर, तोरन, बंदन,
गृह—टकराते जिनसे विमान, गृह—जिनका सब आतंक मान,
सिर झुका समझते धन्य प्राण, ये आन-बान, ये सभी शान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी ताक़त पर किसान!

ये रंग-महल, ये मान-भवन, ये लीलागृह, ये गृह-उपवन,
ये क्रीड़ागृह, अंतर आंगण, रनिवास ख़ास, ये राज-सदन,
ये उच्च शिखर पर ध्वज निशान, ड्योढ़ी पर शहनाई सुतान,
पहरेदारों के घर कृपाण, ये आन-बान, ये सभी शान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी ताक़त पर किसान!

ये नूपुर की रुनझुन-रुनझुन, ये पायल की छम-छम-छम धुन,
ये गमक, मीड़, मीठी गुनगुन, ये जन-समूह की गति सुनमुन,
ये मेहमान, ये मेज़बान, साकी सूराही का समान,
ये जलसा, महफ़िल समाँ, तान, ये करते हैं किस पर गुमान?

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी रहमत पर किसान!
वह तेरी ताक़त पर किसान!

चलती शोभा का भार, लिए अंगों का तरुण उभार लिए,
नखशिख सोलह शृंगार किए, रसिकों के मन का प्यार लिए,
वह रूप, देख जिसको अजान जग सुध-बुध खोता, हृदय-प्राण,
विधि की सुन्दरता का बखान, प्राणों का अर्पण, प्रणय गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिकमत पर किसान!
वह तेरी क़िस्मत पर किसान!

सभ्यता तीन बल खाती है, इठलाती है, इतराती है,
शिष्टता लंक लचकामी है, झुक झूम भूमि-रज लाती है,
नम्रता, विनय, अनुनय महान सज्जनता, मधुर स्वभाव-वान,
आगत-स्वागत, सम्मान-मान, सरलता, शील के विशद गान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी रहमत पर किसान!
वह तेरी क़ुव्वत पर किसान!

शूरों-वीरों के बाहुदंड, जिनमें अक्षय बल है प्रचंड,
ये प्रणवीरों के प्रण अखंड, जो करते भूतल खंड-खंड,
ये योधाओं के धनुष-बाण, ये वीरों के चमचम कृपाण,
ये शूरों के विक्रम महान, ये रणवीरों के विजय-तान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी रहमत पर किसान!
वह तेरी ताक़त पर किसान!

ये बड़े-बड़े प्राचीन क़िले, जो महाकाल से नहीं हिल,
ये यशःस्भ जो लौह ढले, जिनमें वीरों के नाम लिखे,
ये आर्यों के आदर्श गान, ये गुप्त-वंश की विजय तान,?
ये रजपूति जौहर गुमान, ये मुग़ल-मराठों के बखान,

वह तेरी दौलत पर किसान!
वह तेरी मेहनत पर किसान!
वह तेरी हिम्मत पर किसान!
वह तेरी जुरअत पर किसान!

झोंपड़ियों की ओर

जिनके अस्थि-पंजरों की नींवों पर ये प्रासाद खड़े,
जिनके उष्ण रक्त के गारे में से गढ़ डाले भवन बड़े।
जिनकी भूखों की होली पर मना रहे तुम दीवाली,
जिनके तुम उज्ज्वल! देखो, उनकी देहें काली-काली।
उन भोले-भाले कृषकों की करुण कथाओं पर पिघलो!
महलों को भूलो प्यारे! अब झोंपड़ियों की ओर चलो!

उनके फटे चीथड़े देखो, अपने वस्त्र विभवशाली;
उनका रोटी-नमक निहारो, अपनी खीर-भरी थाली।
उनके छूँछे टेंट निहारो, अपनी बसनी धनवाली;
उनके सूखे खेत निहारो, अपनी उपवन की हरियाली!
यह अन्याय अनीति मिटाओ, युग-युग का दुख दैन्य दलो।
महलों को भूलो प्यारे! अब झोंपड़ियों की ओर चलो!

राणा प्रताप के प्रति

कल हुआ तुम्हारा राज तिलक, बन गए आज ही बैरागी?
उत्फुल्ल मधु-मदिर सरसिज में यह कैसी तरुण अरुण आगी?

क्या कहा कि—
'तब तक तुम न कभी वैभव—सिंचित सिंगार करो'
क्या कहा कि
'जब तक तुम न विगत गौरव स्वदेश उद्धार करो!'

माणिक मणिमय सिंहासन को कंकड़ पत्थर के कोनों पर,
सोने-चाँदी के पात्रों को पत्तों के पीले दोनों पर,

वैभव से विह्वल महलों को काँटों की कटु झोंपड़ियों पर,
मधु से मतवाली बेलाएँ भूखी बिलखाती घड़ियों पर,
रानी, कुमार-सी निधियों को माँ के आँसू की लड़ियों पर,
तुमने अपने को लुटा दिया आज़ादी की फूलझड़ियों पर!

निर्वासन के निष्ठुर प्रण में धुँधुवाती रक्त-चिता रण में,
बाणों के भीषण वर्षण में फ़ौवारे-से बहते व्रण में,
बेटे की भूखी आहों में, बेटी की प्यासी दाहों में,
तुमने आज़ादी को देखा मरने की मीठी चाहों में!

किस अमर शक्ति आराधन में, किस मुक्ति युक्ति के साधन में,
मेरे बैरागी वीर! व्यग्र किस तपबल के उत्पादन में?
हम कसे कवच, सज अस्त्र-शस्त्र, व्याकुल हैं रण में जाने को,
मेरे सेनापति! कहाँ छिपे? तुम आओ शंख बजाने को;

जागो! प्रताप, मेवाड़ देश के लक्ष्यभेद हैं जगा रहे;
जागो! प्रताप, माँ-बहनों के अममान-छेद हैं जगा रहे;
जागो प्रताप, मदवालों के मतवाले सेना सजा रहे;
जागो प्रताप, हल्दीघाटी में वैरी भेरी बजा रहे!

मेरे प्रताप, तुम फूट पड़ो मेरे आँसू की धारों से;
मेरे प्रताप, तुम गूँज उठो मेरी संतप्त पुकारों से;
मेरे प्रताप तुम बिखर पड़ो मेरे उत्पीड़न-भारों से;
मेरे प्रताप, तुम निखर पड़ो मेरे बलि के उपहारों से।

मधुर तक़ाज़ा

प्राणों पर इतनी ममता, औ' स्वतंत्रता का सौदा?
बिना तेल के दीप जलाने का है कठिन मसौदा!
आँसू बिखराते बीतेंगी जलती जीवन-घड़ियाँ।
बिना चढ़ाए शीश नहीं टूटेंगी माँ की कड़ियाँ!

दुनिया में जीने का सबसे
सुंदर मधुर तक़ाज़ा :
ऐ शहीद! उठने दे
अपना फूलों भरा जनाज़ा।

सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी

सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी,
जागो मेरे सोनेवाले!

जब सारी दुनिया सोती थी, तब तुमने ही उसे जगाया,
दिव्य ज्ञान के दीप जलाकर तुमने ही तम दूर भगाया;
तुम्हीं सो रहे, दुनिया जगती, यह कैसा मद है मतवाले?
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

तुमने वेद, उपनिषद रचकर जग जीवन का मर्म बताया,
ज्ञान शक्ति है, ज्ञान मुक्ति है, तुमने ही तो गान सुनाया;
अक्षर से अनभिज्ञ तुम्हीं हो, पिए किस नशा के प्याले?
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

गंगा-यमुना के कूलों पर सप्त-सौध थे खड़े तुम्हारे,
सिंहासन था, स्वर्ण-छत्र था, कौन ले गया हर वे सारे?
टूटी झोंपड़ियों में अब तो जीने के पड़ रहे कसाले!
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

भूल गए क्या राम-राज्य वह, जहाँ सभी को सुख था अपना,
थे धन-धान्य-पूर्ण गृह अपने, आज बना भोजन भी सपना;
कहाँ खो गए वे दिन अपने, किसने तोड़े घर के ताले?
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

भूल गए वृंदावन, मथुरा, भूल गए क्या दिल्ली, झाँसी?
भूल गए उज्जैन, अवंती, भूले सभी अयोध्या, काशी?
यह विस्मृति की मदिरा तुमने कब पी ली, मेरे मदवाले!
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

भूल गए क्या कुरुक्षेत्र वह, जहाँ कृष्ण की गूँजी गीता,
जहाँ न्याय के लिए अचल हो पांडु-पुत्र ने रण को जीता?
फिर कैसे तुम भीरु बने हो, तुमने रण-प्रण के व्रण पाले!
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

तुमने तो जापान चीन तक उपनिवेश अपने फैलाए,
तुमने ही तो सिन्धु पार जा करुणा के संदेश सुनाए;
भूल गए कैसे गौतम को, जो थे जग-तम के उजियाले?
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

याद करो अपने गौरव को, थे तुम कौन, कौन हो अब तुम।
राजा से बन गए भिखारी, फिर भी मन में तुम्हें नहीं ग़म?
पहचानो फिर से अपने को, मेरे भूखों मरनेवाले!
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

जागो हे पांचालनिवासी! जागो हे गुर्जर, मद्रासी!
जागो हिन्दू, मुग़ल, मरहठे! जागो मेरे भारतवासी!
जननी की ज़ंजीरें बजतीं, जगा रहे कड़ियों के छाले!
सुना रहा हूँ तुम्हें भैरवी, जागो मेरे सोनेवाले!

बढ़े चलो! बढ़े चलो!

न हाथ एक शस्त्र हो,
न साथ एक अस्त्र हो,
न अन्न, नीर वस्त्र हो,
हटो नहीं डटो वहीं, बढ़े चलो, बढ़े चलो!

रहे समक्ष हिमशिखर,
तुम्हारा प्रण उठे निखर
भले ही जाए तन बिखर;
रुको नहीं, झुको नहीं, बढ़े चलो, बढ़े चलो!

घटा घिरी अटूट हो,
अधर में कालकूट हो,
वही अमृत का घूँट हो;
जिये चलो, मरे चलो, बढ़े चलो, बढ़े चलो!

गगन उगलता आग हो,
छिड़ा मरण का राग हो,
लहू का अपने फाग हो;
अड़ो वहीं, गड़ो वहीं, बढ़े चलो, बढ़े चलो?

चलो, नई मिसाल हो,
जलो, नई मशाल हो,
बढ़ो, नया कमाल हो;
रुको नहीं, झुको वहीं, बढ़े चलो, बढ़े चलो!

कवि से

ओ नवयुग के कवि! जाग, जाग!

प्राचीन-पुरातन कलाकार वैभव-वंदन में हुए लीन;
महलों की तज झोंपड़ियों में कब उनके मन की बजी बीन?
यह गुरु कलंक का पंक मेट, तू बन शोषित का अभयगान;
नंगा, भूखा, प्यासा समाज देखता रहा तेरी, महान्!
नवजीवन के रवि! जाग! जाग!
ओ नवयुग के कवि! जाग, जाग!

है एक ओर पीड़ित जनता; दूसरी ओर साम्राज्यवाद;
गा जनगण के जागरण-गीत, टूटे जिससे युग का प्रमाद!
पिस गई हमारी रीढ़ आह! ढोया है अब तक राज्य भार;
वल का संबल दे दुर्बल को, वह उठे आज निज को निहार!
नवचेतन की छवि! जाग! जाग!
ओ नवयुग के कवि! जाग, जाग!

गाओ, मेरे युग के गायक! वह महाक्रांति का अभयगान,
झुलसें जिसकी ज्वालाओं में अगणित अन्यायों के वितान।
रूढ़ियाँ, अन्ध-विश्वास घोर, रे! जड़ जीवन का तिमिर चीर!
आलोक सत्य का फैला दे, वह चले मुक्त जीवन-समीर!
ओ नव बलि की हवि! जाग! जाग!
ओ नवयुग के कवि! जाग, जाग!

भारतवर्ष

वह महिमामय अपना भारत, वह गरिमामय सुंदर स्वदेश!
युग-युग से जिसका उन्नत सिर है किए खड़ा हिमगिरी नगेश!

जिसके मंदिर के शाखों से गूँजा अजेय बन ब्रह्मवाद;
भूले नश्वर तन का प्रमाद, अमरात्मा का पाया प्रसाद।
है अमर कीर्ति, हैं अमर प्राण, अमरों का अद्‌भुत अमिट देश।

इतिहास-पटल पर संसृति के जो स्वर्ण-वर्ण में लिखा नाम,
वह है रघुपति की जन्मभूमि, वह है यदुपति का जन्म-धाम।
जिसके तृण-तृण में, कण-कण में वंशी बजती रहती अशेष।

युग-युग से जो पृथ्वीतल पर है भासमान बन गगन-दीप,
कितने ही राष्ट्र-यान उबरे पाकर प्रकाश जिसके समीप।
तट का अपार भव-सागर के जो कर्णधार कौशल-निवेश।

रण वरण किया धर चरण सुदृढ़, तब मरण बना निज स्वर्गद्वार;
पुरुषों ने रण-कंकण पहना, रमणी ने जौहर का शृंगार।
आभरण बनाया गौरव को आवरण हटा सुख के अशेष।

कितने ही राष्ट्र उठे जग में, हो गए और कितने विलीन,
जो महाकाल की छाती पर आरूढ़ आज बन चिर-नवीन।
विश्वंभर के करुणा-बल पर युग दुर्जय देशेश देश।
वह महिमामय अपना भारत, वह गरिमामय सुंदर स्वदेश।

तुलसीदास

अकबर का है कहाँ आज मरकत सिंहासन?
भौम राज्य वह, उच्च भवन, चारण, बंदीजन;
धूलि धूसरित ढूह खड़े हैं बनकर रजकण;
बुझा विभव-वैभव-प्रदीप, कैसा परिवर्त्तन?

महाकाल का वक्ष चीरकर किन्तु निरंतर
सत्य सदृश तुम अचल खड़े हो अवनीतल पर;
रामचरित-मणि-रत्न-दीप गृह-गृह में भास्वर,
वितरित करता ज्योति, युगों का तम लेता हर।

आज विश्व-उर के सिंहासन पर हो मंडित,
दीप्तिमान तुम अतुल तेज से, कांति अखंडित;
वाणी-वाणी में गुंजित हो बन पावन स्वर,
आज तुम्हीं, कविश्रेष्ठ! अमर हो अखिल धरा पर।

वंदिनी तव वंदना में कौन-सा मैं गीत गाऊँ?

वंदिनी तव वंदना में कौन-सा मैं गीत गाऊँ?

स्वर उठे मेरा गगन में, हो ध्वनित प्रत्येक मन में;
कोटि कंठों में तुम्हारी वेदना कैसे गुँजाऊँ?
फिर न कसकें क्रूर कड़ियाँ, हों सुशीतल जलन-घड़ियाँ;
प्राण का चंदन तुम्हारे किस चरणतल पर लगाऊँ?

धूलि-लुंठित हों न अलकें, खिलें पा नवज्योति पलकें;
दुर्दिनों में भाग्य की मधु-चंद्रिका कैसे खिलाऊँ?
तुम उठो, माँ! पा नवल बल, दीप्त हो फिर भाल उज्ज्वल!
इस निविड़ नीरव निशा में किस उषा की रश्मि लाऊँ?

वंदिनी तव वंदना में कौन-सा मैं गीत गाऊँ?

आज मैं किस ओर जाऊँ?

आज मैं किस ओर जाऊँ?
इधर है रण का निमंत्रण, उधर कर में प्रेम कंकण;
भ्रमित, चकित, जड़ित बना मन, मैं किधर निज पग बढ़ाऊँ?
मृत्यु आलिंगन इधर है, अधर का चुंबन उधर है,
मधु भरे दोनों चषक हैं, किन्हें प्राणों से लगाऊँ?

त्याग दूँ क्या यह प्रलय पथ, चलूँ, चढ़ लूँ बढ़ प्रणय-रथ,
इति बने यह द्वंद्व का अथ, मिलन में मंगल मनाऊँ?
किन्तु, उधर पुकार आती, विकल रव चीत्कार आती,
क्वणित बनती व्रणित छाती, तव किसे कैसे भुलाऊँ?

प्राण! दो तुम भाल-चंदन, विदा दो, हो मातृ-वंदन,
शक्ति दो तुम, भक्ति जागे, मुक्ति-पथ पर शिर चढ़ाऊँ!
आज रण की ओर जाऊँ!

जागरण गीत

अब न गहरी नींद में तुम सो सकोगे,
गीत गाकर मैं जागने आ रहा हूँ।
अतल अस्ताचल तुम्हें जाने न दूँगा,
अरुण उदयाचल सजाने आ रहा हूँ।

कल्पना में आज तक उड़ते रहे तुम,
साधना से सिहरकर मुड़ते रहे तुम;
अब तुम्हें आकाश में उड़ने न दूँगा,
आज धरती पर बसाने आ रहा हूँ।

सुख नहीं यह, नींद में सपने सँजोना,
दुःख नहीं यह शीश पर गुरु भार ढोना;

शूल तुम जिसको समझते थे अभी तक,
फूल मैं उसको बनाने आ रहा हूँ।

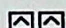
फूल को जो फूल समझे, भूल है यह,
शूल को जो शूल समझे, भेल है यह;
मूल में अनुकूल या प्रतिकूल के कण,
धूलि भूलों की हटाने आ रहा हूँ।

देखकर मँझधार तुम घबड़ा न जाना,
हाथ ले पतवार तुम घबड़ा न जाना;
मैं किनारे पर तुम्हें थकने न दूँगा,
पार मैं तुमको लगाने आ रहा हूँ।

तोड़ दो मन में कसी सब शृंखलाएँ,
तोड़ दो मन में बसी संकीर्णताएँ;
बिन्दु बनकर मैं तुम्हें ढलने न दूँगा,
सिन्धु बन तुमको उठाने आ रहा हूँ।

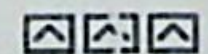
तुम उठो, धरती उठे, नभ शिर उठाए,
तुम चलो गति में नई गति झनझनाए;
विपथ होकर मैं तुम्हें मुड़ने न दूँगा,
प्रगति के पथ पर बढ़ाने आ रहा हूँ।

दासता इंसान की करनी नहीं है,
दासता भगवान की करनी नहीं है;
वंदना में मैं तुम्हें झुकने न दूँगा,
वंदनीय तुम्हें बनाने आ रहा हूँ।



संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. *एक कवि एक देश (पं. सोहनलाल द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ)*, प्रयाग, 1969
2. *काव्य के इतिहास पुरुष : सोहनलाल द्विवेदी*, अमर बहादुर सिंह 'अमरेश', हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, 1971 ई.
3. *सोहनलाल द्विवेदी और उनका काव्य*, डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा, आशा प्रकाशन गृह, करोल बाग, नई दिल्ली-11005, 1987 ई.
4. *जीवन पथ पर*, डॉ. श्याम सिंह शशि प्रकाश शिलालेख, 4/32, सुभाष गली विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032
5. *सोहनलाल द्विवेदी ग्रंथावली*, राकेश गुप्त, सर्वोदय नगर, सासनी गेट, अलीगढ़-202001
6. *राष्ट्रकवि पं. सोहनलाल द्विवेदी के काव्य का सांस्कृतिक अध्ययन*, डॉ. मृदुला द्विवेदी, दुर्गा पब्लिकेशंस, दिल्ली-53
7. *हिन्दी बाल कविता का विकास*, प्रकाश मनु, मेधा बुक्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
8. *गाँधी अभिनंदन ग्रंथ*, सं. सोहनलाल द्विवेदी, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ 1944
9. *हिन्दी साहित्य कोश*, भाग-1, ज्ञान मंडल लिमिटेड, कबीर चौरा वाराणसी-1
10. *हिन्दी साहित्य कोश*, भाग-2, ज्ञान मंडल लि. वाराणसी-1 (1986)
11. *हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास* (खंड-2), डॉ. रामप्रसाद मिश्र सत्साहित्य भंडार, अशोक विहार, दिल्ली-52 (1998)
12. *राष्ट्रभाषा संदेश*, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, अंक-28 फ़रवरी 2005 में (श्री बद्रीनारायण तिवारी का लेख)
13. *एक कवि एक देश : तुम चन्दन हम पानी*, अलका प्रदीप, उत्कर्ष अकादमी, 112/2/2 सी स्वरूप नगर, कानपुर।
14. *समीक्षालोक* (द्वैमासिक), सं. रामगोपाल शर्मा दिनेश



सोहनलाल द्विवेदी (जन्म : 4 मार्च 1906 ई., फ़तेहपुर; निधन : 1 मार्च 1988 ई.) हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना के गायक कवि के रूप में विख्यात हैं, साथ ही वे बालकाव्य के अप्रतिम रचयिता भी हैं। उनके काव्य में मातृभूमि-वंदना, अतीत का गौरवगान, स्वातंत्र्य-प्रेम, शहीदों के प्रति नमन, स्वदेशी आंदोलन, अन्याय के प्रति क्षोभ, उद्‍बोधन तथा उदात्त मानव मूल्यों का सम्मान जैसे राष्ट्रीयता के सभी घटक प्राप्य हैं। उनकी काव्य रचना का काल भारतीय स्वातंत्र्य-पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर दोनों ही रहा है। इसलिए उनकी रचनाओं में जहाँ राष्ट्रीय तेजस्विता और मनस्विता का अभिनंदन और अभिषेक है, वहीं विपथगा स्थितियों, परिस्थितियों पर सीधी-सच्ची चोट और आक्रोश भी है। वस्तुतः उनका संपूर्ण चिन्तन, मनन और लेखन भारत एवं भारतीयता को समर्पित है। वे आजीवन एक सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में सक्रिय रहे। कानपुर विश्वविद्यालय से मानद डी. लिट्. की उपाधि प्राप्त तथा भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' अलंकरण से अलंकृत द्विवेद्वी जी को जीवनपर्यन्त अनेक सम्मानों/उपाधियों से विभूषित किया जाता रहा।

सोहनलाल द्विवेदी की प्रकाशित कृतियों में 19 काव्य कृतियाँ, 24 बालगीत-संग्रह तथा तीन संपादित ग्रंथ शामिल हैं। वे 1938 ई. से 1945 ई. तक *दैनिक अधिकार* (समाचार पत्र) तथा 1965 ई. से 1974 ई. तक *बालसखा* (बालपत्रिका) के संपादन से संबद्ध रहे। उनकी उल्लेखनीय काव्यकृतियाँ हैं—*भैरवी, युगाधार, प्रभाती, पूजागीत, मुक्तिगंधा, जय गाँधी, गाँध्ययन, जय भारत जय, संजीवनी* तथा बालगीत-संग्रह हैं—*शिशु गीत, शिशु भारती, बाल भारती, बच्चों के बापू, गीत भारती।*

प्रस्तुत विनिबंध के लेखक **डॉ. परमानंद पांचाल** (जन्म : 4 जुलाई 1930 ई., बाग़पत, उ.प्र.) प्रतिष्ठित हिन्दी लेखक और भाषाविद् हैं। आप आरंभ में अध्यापन कार्य में संलग्न रहे तथा बाद में केन्द्र सरकार में राजभाषा विभाग से संबद्ध हो गए। आपने भारत के राष्ट्रपति के विशेष कार्याधिकारी एवं संघ लोक सेवा आयोग में राजभाषा निदेशक के रूप में कार्य किया है। साहित्य अकादेमी के कार्यकारी मंडल (2003-07 ई.) के सदस्य होने के साथ ही आप विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं से निरंतर संबद्ध रहे हैं। आपकी प्रकाशित कृतियों में *हिन्दी के मुस्लिम साहित्यकार, दक्खिनी हिन्दी : भाषा और इतिहास, दक्खिनी हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली, हिन्दी : भाषा, राजभाषा और लिपि* प्रमुख हैं। आपने उर्दू और अंग्रेज़ी में भी लेखन और अनुवाद कार्य किए हैं।

ISBN 81-260-2261-2

मूल्य : पच्चीस रुपये